जिसने बदली दिशा जगत् की,
धरती और आकाश की ।
जय बोलो ऋषि दयानन्द की,
जय सत्यार्थ प्रकाश की ।।

।। ओ३म् ।।

वर्ष -५८ अंक - १२
मूल्य : एक प्रति १० रुपये
वार्षिक :१००) रु०
आजीवन -१०००) रु०
प्रतिमास ता० १३ को प्रकाशित

आर्य-संसार

मार्ग शीर्ष -पौष : सम्वत् २०७२ वि० दिसम्बर, २०१५

पं० श्री अवधबिहारी लाल

जन्म - सन् २४ फरवरी १९०३ ई० – मृत्यु - ५ दिसम्बर १९६० ई०

(विवरण पृष्ठ ७ पर)

आर्य समाज कलकत्ता की गतिविधियाँ

आर्य समाज कलकत्ता का १३०वाँ वार्षिकोत्सव

आर्य समाज कलकत्ता, १९ विधान सरणी कोलकाता-६ का १३०वाँ वार्षिकोत्सव शनिवार १९ दिसम्बर से रविवार २७ दिसम्बर २०१५ पर्यन्त हृषीकेश पार्क (निकट-सिटी कॉलेज) आम्हर्स्ट स्ट्रीट, कोलकाता-९ में हर्षोल्लास पूर्वक मनाया जायेगा जिसमें प्रतिदिन प्रातः ऋग्वेद पारायण यज्ञ, अपराह्न व सायंकाल विभिन्न सम्मेलन तथा सायंकालीन सत्र में आमन्त्रित वैदिक विद्वानों के विभिन्न विषयों पर सारगर्भित उपदेश व भजन होंगे।

आमंत्रित विद्वत्‌गण

स्वामी धर्मेश्वरानन्दजी (गाजियाबाद), डॉ० धर्मवीर जी (अजमेर), श्री योगेशदत्त आर्य (बिजनौर)

मुख्य कार्यक्रम

प्रतिदिन प्रातः	७.३० बजे से ९.३० बजे तक	**ऋग्वेद पारायण यज्ञ**
प्रतिदिन प्रातः	९.३० बजे से १०.३० बजे तक	**भजन व उपदेश**
प्रतिदिन प्रातः	१०.३० बजे से १२.०० बजे तक	**बंग-भाषा कार्यक्रम**
प्रतिदिन सायं	४.०० बजे से ६.०० बजे तक	**बंग-भाषा कार्यक्रम**
प्रतिदिन सायं	६.०० बजे से ९.३० बजे तक	**संध्या, भजन व व्याख्यान**
१९ दिसम्बर २०१५	अपराह्न २ बजे से ५ बजे तक	**विशाल एवं सुसज्जित शोभा यात्रा**
२० दिसम्बर २०१५	पूर्वाह्न १० बजे से १२ बजे तक अपराह्न ३ बजे से ५.३० बजे तक	**सामूहिक सत्संग एवं उद्घाटन समारोह** **बालक सत्संग**
२१ दिसम्बर २०१५	सायं ६ बजे से ९.३० बजे तक	**राष्ट्र रक्षा सम्मेलन**
२२ दिसम्बर २०१५	सायं ६ बजे से ९.३० बजे तक	**भजन व व्याख्यान**
२३ दिसम्बर २०१५	अपराह्न २ बजे से ५ बजे तक सायं ६ बजे से ९.३० बजे तक	**महिला सम्मेलन** **स्वामी श्रद्धानन्द बलिदान दिवस**
२४ दिसम्बर २०१५	सायंकालीन अधिवेशन	**भजन व व्याख्यान**
२५ दिसम्बर २०१५	सायं ६ बजे से ९.३० बजे तक	**आर्य संस्कृति सम्मेलन**
२६ दिसम्बर २०१५	सायंकालीन अधिवेशन	**शंका समाधान, भजन व व्याख्यान**
२७ दिसम्बर २०१५	**ऋग्वेद पारायण यज्ञ की पूर्णाहुति, वेद सम्मेलन व ऋषि लंगर।**	

द्रष्यव्य: ● **कार्यक्रम में परिवर्तन का अधिकार सुरक्षित है।**

● **ऋग्वेद पारायण यज्ञ में यजमान बनने के लिए कृपया आर्यसमाज के कार्यालय से सम्पर्क करें।**

सुरेशचन्द जायसवाल
प्रधान
०९४३३१३८९००

दीपक आर्य
मन्त्री
०८९६१७७४९४०

ओ३म्

आर्य-संसार

वर्ष ५८ अंक — १२
मार्गशीर्ष-पौष २०७२ वि०
दयानन्दाब्द १९१
सृष्टि सं० १,९६,०८,५३,११६
दिसम्बर — २०१५

आद्य सम्पादक
प्रो० उमाकान्त उपाध्याय
(स्मृति शेष)

मूल्य : एक प्रति १० रुपये
वार्षिक : १०० रुपये
आजीवन : १००० रुपये

सम्पादक :
श्री राजेन्द्र प्रसाद जायसवाल
सहयोगी संपादक :
श्रीमती सरोजिनी शुक्ला
श्री सत्यप्रकाश जायसवाल
पं० योगेशराज उपाध्याय

इस अंक की प्रस्तुति

१. इस अंक की प्रस्तुति		३
२. पाञ्चजन्य अग्नियाँ	वेद-वीथिका	४
४. पं० श्री अवधबिहारी लाल		७
५. वैदिक धर्म और गीता	श्री कामता प्रसाद मिश्र	९
४. हिण्डौन सिटी में चार आर्य विद्वानो का सम्मान	श्री प्रभाकरदेव आर्य	१२
५. गृहसूत्रों की उपादेयता	श्री उदयन आर्य	१३
६. ८७वें बलिदार दिवस पर विशेष भारतीय स्वाधीनता संग्राम के अपराजेय योद्धा पंजाब केसरी लालालाजपत राय	प्रो० ओमकुमार आर्य	१५
७. बौद्धो के ब्रह्मदेश (म्याँमार) के रंगून से एक पाती	आचार्य आनंद 'पुरूषार्थी'	२०
८. पंच महायज्ञ पाँच कष्टों को काटने वाले होते हैं	श्री खुशहाल चन्द्र आर्य	२२
९. वेदोक्त ईश्वर की मान्यता	अभिमन्यु कुमार खुल्लर	२५
११. स्वामी जी के पत्रों तथा विज्ञापनों में यज्ञ व योग सम्बन्धी चर्चा	डॉ० अशोक आर्य	२७

आर्य समाज कलकत्ता

१९, विधान सरणी, कोलकाता-७०० ००६

दूरभाष : २२४१-३४३९ *email : aryasamajkolkata@gmail.com*

'आर्य संसार' में प्रकाशित लेखों का उत्तरदायित्व सम्बन्धित लेखकों पर है।
किसी भी विवाद की स्थिति में न्याय क्षेत्र कोलकाता ही होगा।

पाञ्चजन्य अग्नियाँ

ऋचो नामास्मि यजूंषि नामास्मि सामानि नामास्मि ।
ये अग्नयः पाञ्चजन्या अस्यां पृथिव्यामधि ।
तेषामसि त्वमुत्तमः प्र नो जीवातवे सुव ।।

यजु० १८-८७

शब्दार्थ :-

ऋचः	=	ऋचाएं (ज्ञान)	नामास्मि	=	नाम वाला हूं
यजूंषि	=	यजुओं (कर्म)	सामानि	=	सामों (उपासना-साम्य-सुस्थिर)
ये	=	जो	अग्नयः	=	अग्नियां, तेज
पाञ्चजन्याः	=	पांच जनों वाली	अस्याम्	=	इसमें
पृथिव्याम्	=	पृथ्वी में	अधि	=	ऊपर
तेषाम्	=	उनमें	असि	=	हो
त्वम्	=	तुम	उत्तमः	=	उत्तम, श्रेष्ठ
नः	=	हमारे	जीवातवे	=	जीवन के लिए
प्र+सुव	=	उत्पन्न करो			

भावार्थ :-मैं ज्ञान, कर्म उपासना, नाम वाला हूँ । जो पाञ्चजन्य अग्नियां इस पृथ्वी पर हैं उनमें तुम उत्तम हो । वही उत्तमता हमारे जीवन के लिए उत्पन्न करो ।

विचार विन्दु :

१. नाम क्या है ? नाम-नम्रता-अहंकार-विचार
२. ऋग्-यजु:-साम, ज्ञान, कर्म, उपासना का साम्य, सुस्थिरता का महत्व ।
३. पाञ्चजन्य अग्नियां क्या हैं ? व्यक्ति से विश्व तक पाञ्चजन्य की महिमा ।
४. व्यक्ति उत्तम क्यों ? व्यक्ति-समष्टि संबंध
५. वही उत्तम अग्नि हममें उत्पन्न हो ।

व्याख्या

प्रस्तुत मंत्र में जीवन के उत्थान के लिए पाञ्चजन्य अग्नियों की उपयोगिता का वर्णन है । एक विशेष बात ध्यान देने की यह है कि जीवन का उत्थान मनुष्य जन्म की ही विशेषता है । पशु-पक्षी आदि सभी जीवन पाते हैं और कुछ पशु-पक्षियों में थोड़ी बहुत सामूहिक सामाजिक भावना भी पाई जाती है । किन्तु कोई पशु

या पक्षी या जलचर यह नहीं जानता कि वह अपने जीवन का उत्थान कैसे करें ? मनुष्य अपने समाज का उत्थान कैसे करें ?

मनुष्य अपने समाज का भी उत्थान कर सकता है । केवल मनुष्य ऐसा है जिसका परमेश्वर ने निर्माण भी ऐसा किया है कि यह अपना उत्थान कर सकता है। मनुष्य को भगवान् ने अपने जीवन का उत्थान करने के लिए ज्ञान, कर्म और उपासना तीन साधन दिये हैं। मनुष्य ज्ञान प्राप्त करें, उसके अनुकूल कर्म करें और ज्ञान और कर्म के साथ परमेश्वर की उपासना भी करता रहे। मंत्र में कहा है कि मेरा नाम ऋचा हैं अर्थात् मैं ज्ञान वाला हूँ (ऋचा=ज्ञान) । इसी प्रकार कहते हैं कि मैं यजुः अर्थात् कर्मशील हूं और फिर इस ज्ञान और कर्म को सुस्थिर साम्य करके संसार के कल्याण और प्रभु की उपासना में लगाता हूँ ।

मंत्र में पाञ्चजन्य अग्नियों को संसार में उपस्थित बताया गया हैं । ये जनों से संबंधित हैं इसलिए जन्य हैं और पृथ्वी में ये पांच जगह रहती हैं - (१) व्यक्ति (२) परिवार (३) समाज (४) राष्ट्र और (५) विश्व । पांचों स्थानों पर अग्नि, तेज होना चाहिए । अग्नि ऊर्जा और प्रकाश का दाता है । किसी भी व्यक्ति में तेज, ऊर्जा, प्रतिभा और ज्ञान का प्रकाश होना चाहिए । व्यक्ति में जब प्रतिभा और तेजस्विता होती है तो वह कभी स्तब्ध नहीं होता, कभी किंकर्तव्य-विमूढ़ नहीं होता । प्रतिभावान् ओजस्वी व्यक्ति में प्रत्युत्पन्न मतित्व होता है । वह कभी समस्याओं से चकराता नहीं। प्रत्युत्पन्न मतित्व और प्रतिभा का एक प्यारा-सा उदाहरण देखिये -

एक श्रमजीवी किसान धूप में हल चलाकर पसीने -पसीने तर दोपहर को घर लौट रहा था । गांव के पास एक बड़ा सा गूलर का सघन वृक्ष था । किसान ने पसीने सुखाने के लिए पेड़ की छाया में बैलों को खड़ा कर दिया और आप वहीं शीतल छाया में बैठकर सुस्ताने लगा । वहीं एक विज्ञान पढ़े अच्छे वैज्ञानिक बाबू भी आकर बैठ गये । किसान ने हवा के शीतल झोंके के साथ शीतलता का आनन्द लेते हुए कहा 'प्रभु तेरी माया अपरम्पार' । अब वैज्ञानिक बाबू ने उसका मजाक उड़ाया, बोले-भाई मुझे तो परमेश्वर पर विश्वास नहीं है । किसान ने बाबू से कहा-आपके पास गूलर का फल पड़ा है, उसे उठाइये तो । बाबू ने फल उठा लिया । किसान बोला--बाबू तोड़कर इसके बीजों को गिनो तो । बाबू ने फिर मजाक किया । इतने छोटे बीजों को गिनने की मूर्खता कौन करे ? किसान ने कहा मत गिनिये । किन्तु इसमें एक छोटे से बीज से इतना बड़ा गूलर का पेड कैसे बन गया ? बाबू स्तब्ध रह गये । यह है - प्रतिभा प्रत्युत्पन्न मतित्व और विश्वास। परिवारों में भी प्रतिभा होती हैं । समाज और राष्ट्र इनमें भी अग्नि की तेजस्विता होती है । यह अग्नियां हैं जिनसे मनुष्य उन्नति करता है ।

मंत्र में कहा है कि मेरा नाम ज्ञान, कर्म और उपासना अर्थात् समन्वय है । नाम का भी बड़ा महत्व है । नाम व्यक्ति के अन्तरतम के साथ जुड़ जाता हैं । चार-छः जन सोये हों तो जिसका नाम ले के पुकारा जाता है, वही जाग जाता है । यह है नाम के साथ तादात्म्य और नाम की महिमा । मंत्र में कहा है कि हे मनुष्य ! तुम्हारा नाम ज्ञान है, तुम्हारा नाम कर्म है और तुम में समन्वय, सांमजस्य का भी भाव है । यह समन्वय सामंजस्य ही है जो परिवार, समाज और राष्ट्र का प्राण है । मंत्र में मनुष्य को आश्वस्त

किया गया है कि तुम प्राणियों में उत्तम हो। अतः अपने जीवन के लिए, परिवार, समाज, राष्ट्र और विश्व के लिए इन अग्नियों को उत्तम रूप से उत्पन्न करो । यही अग्नि पांचों प्राणों में रहकर उन्हें बलवान और तेजस्वी बनाती है। यही अग्नि ज्ञान को तेजस्वी बनाती है । यही पाञ्चजन्य अग्नि व्यक्ति और समाज में सामंजस्य पैदा करता है ।

हम ऊपर कह आये हैं कि पाञ्चजन्य अग्नियों के पांच स्थान हैं - (१) व्यक्ति, (२) परिवार, (३) समाज, (४) राष्ट्र और (५) विश्व । इन पांचों स्थलों पर अग्नि की तेजस्विता के लिए उपाय करना चाहिए और उनमें सामंजस्य के लिए प्रयास होना चाहिए। मंत्र में कहा गया है कि इस कार्य का करने वाला उत्तम पात्र व्यक्ति ही है ।

प्रत्येक व्यक्ति अग्नि के गुणों को धारण करने का प्रयास करे, तो यह पांचजन्य अग्नियों की आधारशिला बन जायेगी । अग्नि की प्रमुख विशेषताएं हैं - अग्नि में तेज होता है । अग्नि ऊर्जा उत्पन्न करता है । अग्नि से आलोक प्रकाश (ज्ञान) मिलता है । अग्नि सात्विक है, ऊर्ध्वगामी है । अग्नि की उपस्थिति में किसी पदार्थ में सड़ाँध नहीं पैदा होती । इस प्रकार अग्नि में कम से कम पांच गुण सुलभ हैं- (१) तेजस्विता, (२) ऊर्जा, शक्ति (३) आलोक (ज्ञान) (४) ऊर्ध्वगमन, सात्विकता (५) सड़न को रोकना अर्थात् बुराइयों को मिटाना ।

व्यक्ति अपने चरित्र, चेष्टा, साधन, सुविधा से अग्नि की इन पांचों विशेषताओं को अपने में धारण कर सकता है । नियमों के पालन, सदाचार, व्यायाम, ब्रह्मचर्य और ब्रह्मचर्य के द्वारा व्यक्ति में ऊर्जा और तेज आता है । अध्ययन, स्वाध्याय, उपदेश, प्रवचन आदि से व्यक्ति को आलोक, ज्ञान प्राप्त होता है और यह ज्ञान पवित्रतम उपलब्धि है-'नहि ज्ञानेन सदृशं पवित्रमिह विद्यते' - यह गीता की उक्ति हैं। ज्ञान से ही सदाचार, सद्विचार, तेज और ऊर्जा का भी मार्ग प्रशस्त होता है । इसीलिए तो स्वामी दयानन्द जी ने आर्य समाज का नियम ही बना दिया है - 'अविद्या का नाश और विद्या की वृद्धि करनी चाहिए ।'

अग्नि का चौथा गुण है - ऊर्ध्वगमन । ऊर्ध्वगमन सात्विकता का लक्षण या परिणाम है । श्रीकृष्ण गीता में कहते हैं-'ऊर्ध्वं गच्छन्ति सत्वस्थाः' । सात्विक व्यक्ति हो या परिवार, समाज हो या राष्ट्र या फिर विश्व, जितना सात्विकता बढ़ेगी, उतना ही सबका उत्थान और कल्याण होगा ।

अग्नि की पांचवीं विशेषता है-सड़न को, बुराइयों को नष्ट करना । जिस व्यक्ति में ऊर्जा, तेज, चरित्र होगा, उसमें रोग-प्रतिरोधक क्षमता उतना अधिक होगी । यही बात परिवार, समाज, राष्ट्र और विश्व पर भी लागू होती है ।

ये पांचजन्य अग्नियां, अग्नि की पांचो विशेषताओं को लेकर पांचों स्थानों का उत्थान, कल्याण करती हैं । किन्तु सबकी जड़ में सबसे छोटी इकाई-व्यक्ति का उत्थान है । अतः व्यक्ति उत्तम है ।

मंत्र में व्यक्ति से यह आकांक्षा की गई हैं कि हे मनुष्य ! तुम सारे प्राणियों में उत्तम हो । तुम अपनी भी उन्नति कर सकते हो और अपने परिवार, समाज और राष्ट्र की भी उन्नति कर सकते हो । तुमसे ही विश्व की उन्नति की आशा की जा सकती है । अतः वही उत्तमता सारे विश्व में पैदा करो ।

पं० श्री अवधबिहारी लाल

पं० श्री अवधबिहारी लालजी का जन्म २४ फरवरी सन् १९०३ ई० को हुआ था। इनके पिताजी श्री मुरलीधर जी पुरानागंज, नगर मुंगेर, बिहार प्रान्त के रहने वाले थे। पिताजी अंग्रेजी, संस्कृत, फारसी, अरबी तथा हिन्दी के अच्छे विद्वान् थे और उन्होंने कई पुस्तकें भी लिखी थीं। इस विद्या और लेखनकला की धरोहर से युक्त होकर पं० अवधबिहारी लाल जी ने एम०ए० तथा बी०एल० की उपाधियाँ लेकर वकालत का पेशा आरम्भ किया। पं० अवधबिहारी लालजी की शिक्षा भागलपुर में हुई थी। सन् १९२४ ई० में बी०ए० इंग्लिश ऑनर्स और साथ ही लॉ कालेज से बी०एल० पास करके अभी वकालत का कार्य आरम्भ ही किया था कि सन् १९२७ ई० में श्री मुरलीधर जी का देहान्त हो गया। पं० अवधबिहारी लालजी सत्यनिष्ठ और सदाचारी व्यक्ति थे। पिताजी के देहान्त के बाद घर का व्ययभार आप पर ही आ पड़ा। इधर पण्डित जी स्वभाव से ही वकालत का कार्य पसन्द न करते थे। धीरे-धीरे आपने वकालत का पेशा छोड़ दिया। उन दिनों कांग्रेस का कचहरी-बहिष्कार आन्दोलन भी चल रहा था। उससे प्रभावित होकर आपने मजिस्ट्रेट-पद की नियुक्ति भी स्वीकार नहीं की।

पं० अवधबिहारी लालजी के पिता भी आर्यसमाज मुंगेर के पुराने कार्यकर्त्ता थे। स्वामी श्री मुनीश्वरानन्दजी महाराज से परिवार का घनिष्ठ सम्बन्ध था और उन्हीं के प्रभाव से मुरलीधर जी का परिवार आर्यसमाज की सेवा में लगा था। पं० श्री अवधबिहारी लालजी ने आर्यसमाज के आदर्श और सिद्धान्तों को अपने अनुकूल पाया, फलतः आपका आर्यसमाज के साथ प्रेम बढ़ता ही गया। पं० अवधबिहारी लालजी किसी देशी रियासत में मैनेजर भी बने थे, किन्तु राजा पाखण्डी था, राज्य में पशुबलि आदि होती थी और पं० अवधबिहारी लालजी अपने आदर्शों के सम्मुख मैनेजरी की सर्विस को भी ठुकरा कर अलग हो गये।

तब से पं० अवधबिहारी लालजी शिक्षा के क्षेत्र में कार्य करने लगे और आर्यसमाज के साथ अधिकाधिक सम्पर्क बढ़ने लगा। पण्डित जी ने संस्कृत के अध्ययन को भी बढ़ाया। साहित्याचार्य, वेदतीर्थ तथा पुराणतीर्थ की परीक्षाएँ भी पास कीं। कुछ समय आप मुंगेर आर्यसमाज के प्रधान रहे और तत्पश्चात् आर्य प्रतिनिधि सभा बिहार के उप्रपधान भी निर्वाचित हुए थे।

सन् १९३७ ई० में पं० अवधबिहारी लालजी कलकत्ता आ गये और आर्यसमाज के प्रचार-क्षेत्र में तल्लीन हो गये। सन् १९३९ई० में आर्यसमाज की ओर से हैदराबाद का प्रसिद्ध

सत्याग्रह चलाया जा रहा था । बंगाल में सत्याग्रह के प्रचार का कार्य पं० अवधबिहारी लालजी को सौंपा गया और आपने अपने भाषणों और लेखों से बड़ी योग्यतापूर्वक इस कार्य को निभाया। श्री जवाहरलालजी नेहरू ने किसी व्याख्यान में इस सत्याग्रह को असामयिक कह दिया था । श्री अवधबिहारी लालजी ने अपने भाषणों और लेखों में हैदराबाद सत्याग्रह को उचित, सामयिक और युक्तिपूर्ण सिद्ध किया । श्री जवाहरलालजी को आपने एक युक्तियुक्त पत्र भी लिखा और श्री नेहरूजी ने अपने भाषणों में अपना विचार यहां तक बदल दिया कि वे कहने लगे कि हैदराबाद का सत्याग्रह निरंकुश राजाओं की आखें खोलने वाला है । श्री नेहरूजी ने पं० अवधबिहारी लालजी को व्यक्तिगत पत्र भी लिखा था और उस पत्र में उन्होंने अवधबिहारी लालजी को धन्यवाद भी दिया था तथा सत्याग्रह का औचित्य भी स्वीकार किया था । हैदराबाद सत्याग्रह के प्रचार-कार्य को आपने इस योग्यता से संचालित किया था कि सत्याग्रह में विजय प्राप्त होने के पश्चात् आपको आर्यसमाज के प्रचार के लिए हैदराबाद में बुला लिया गया था। कुछ दिनों तक आप वहाँ आर्यसमाज का प्रचार और शिक्षा-प्रचार का कार्य करते रहे ।

हैदराबाद से आप पुनः कलकत्ता लौटे और आर्य प्रतिनिधि सभा बंग-आसाम के साथ मिलकर प्रतिनिधि सभा बंग-आसाम के उप-प्रधान भी बने । आपने दक्षिण कलकत्ता में दक्षिण कलकत्ता आर्य विद्यालय नाम से एक विद्यालय खोला और यावज्जीवन उस विद्यालय के प्रधानाध्यापक बने रहे । आप विद्यालय का संचालन बड़ी योग्यता से करते रहे और विशेष रूप से धर्मशिक्षा की व्यवस्था विद्यालय में चलाते रहे ।

पं० अवधबिहारी लालजी बड़े सुयोग्य वक्ता, शान्त और मृदुभाषी थे । आपने कई पुस्तकें लिखीं और दक्षिण कलकत्ता आर्य विद्यालय की ओर से आर्य भारती नामक एक मासिक पत्रिका का सम्पादन आरम्भ किया ।

आर्य प्रतिनिधि सभा बंग-आसाम ने 'आर्य समाज' नामक एक मासिक पत्र हिन्दी भाषा में आरम्भ किया था । पं० अवधबिहारी लालजी उसके प्रथम सम्पादक नियुक्त हुए थे । आप शुद्ध लेखक थे । लेखों में आपकी वाणी और विचार बड़े सशक्त हुआ करते थे । आप आर्यमित्र, सार्वदेशिक आदि अन्य पत्रों में भी अपने लेख दिया करते थे । आप सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, दिल्ली के तथा सार्वदेशिक धर्मार्य सभा के भी सदस्य थे । पं० अवधबिहारी लालजी यावज्जीवन आर्यसमाज के सजग सिपाही के रूप में रहे । आपका देहान्त ५ दिसम्बर १९६०ई० को हो गया ।

(आर्य समाज कलकत्ता के शतवर्षीय इतिहास से)

—०—

वैदिक धर्म और गीता

– श्री कामता प्रसाद मिश्र

वैदिक धर्म एक सार्वभौमिक, सार्वकालिक तथा मानवता के कल्याण एवं उत्थान के लिए हैं। परमात्मा की नित्य वाणी को वेद एवं श्रुति नाम से जाना जाता है। वेद परम कारुणिक, सर्वज्ञ, सर्वव्यापक एवं सर्वशक्तिमान परमात्मा की पवित्र वाणी है जो ज्ञान और भाषा से संयुक्त है। प्रत्येक कल्प के प्रारम्भ में परमेश्वर ऋषियों के हृदय में इसका प्रकाश करता है। यह अनन्त तथा नित्य है और परमात्मा के प्रेरणा का फल है। जैसा परमात्मा स्वयं व्यापक और आकाशवत् विस्तार वाला है उसी प्रकार यह वेद वाणी भी विस्तृत है अर्थात् वेद का ज्ञान अनन्त है।

वेद चार हैं उन्हें ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद तथा अथर्ववेद नाम से जाना जाता है। यह परम पवित्र आत्मा वाले चार ऋषियों क्रमशः अग्नि, वायु, आदित्य तथा अंगिरा को परमात्मा से यह ज्ञान वेद रूप में प्राप्त हुआ। वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है। जो सम्पूर्ण ज्ञान-विज्ञान का भण्डार है। वेद के ही सिद्धान्तों, मान्यताओं तथा विचारों पर आधारित वैदिक धर्म है। अन्य जितने भी सम्प्रदाय, मजहब, रिलीजन हैं वे किसी के नाम पर किसी व्यक्ति के विचार पर आधारित हैं। जो उस मजहब तथा सम्प्रदाय के मानने वालों के कल्याण की बात करते हैं परन्तु वैदिक धर्म विश्व के सम्पूर्ण मानव के कल्याण की बात करता है। वैदिक धर्म किसी जाति, सम्प्रदाय व्यक्ति तथा किसी एक देश के कल्याण की बात नहीं करता बल्कि सम्पूर्ण विश्व के सर्वांगीण कल्याण की कामना करता है। वेद कहता है –

''कृण्वन्तो विश्वमार्यम्'' ऋ० ९.६३.५

अर्थात् सम्पूर्ण विश्व के मनुष्यों को सदाचारी, श्रेष्ठ, ज्ञानी, मनीषी अहिंसक तथा मानवतावादी बनाओ।

आर्य समाज के संस्थापक महर्षि दयानन्द सरस्वती जी ने इस तथ्य को गंभीरता से भली भाँति समझा था कि जबतक पृथ्वी पर वेद का प्रकाश नहीं फैलेगा तब तक मतमतान्तरों में विभाजित मानव समाज शान्ति एवं कल्याण के मार्ग का अनुसरण नहीं कर सकेगा। अतः उन्होंने वेद का पढ़ना पढ़ाना और सुनना सुनाना परमधर्म बताया। उन्होंने घोषणा किया कि वेद स्वतः प्रमाण हैं, इसके प्रमाण के लिए प्रमाणान्तर की आवश्यकता नहीं है।

संसार में दो अमोध शक्तियाँ है – शब्द और कृति। परमात्मा मनुष्य को दोनों अलौकिक शक्तियों को मानवता के कल्याण के लिए श्रव्य तथा दृष्य काव्य के रूप में प्रदान किया है जिसे वेद या श्रुति और सृष्टि के रूप में हम जानते हैं। वेद में वह सम्पूर्ण ज्ञान-विज्ञान है जो सृष्टि में परमात्मा ने मानव कल्याणार्थ प्रदान किया है। वेद के आधार पर हम सृष्टि के समग्र रहस्यों को सुलझाकर मानव जीवन को सुखमय बना सकते हैं। ईश्वर ने जैसा सृष्टि रचना किया है वह सब वेद के ज्ञान एवं विज्ञान के अनुकूल है। अतः आज वैज्ञानिक युग में वेदों को श्रेष्ठ एवं प्राचीनतम् होने का गौरव प्राप्त है।

श्रीमद् भगवद्गीता प्राचीन भारतीय साहित्य संस्कृत साहित्य के महाकाव्य महाभारत का एक अंश है। जिसे लगभग एक शताब्दी से मान-सम्मान प्राप्त है। श्रीमती एनीवेसेंट ने गीता का एक अंग्रेजी

अनुवाद गुटके के रूप में प्रकाशित किया था । जिसे अंग्रेजी जानने वालों में इसका प्रचार-प्रसार हुआ और लोगों ने पसन्द किया । उसी के पश्चात् लोकमान्य तिलक ने 'गीता रहस्य' लिखकर राजनैतिक जगत का ध्यान इस ओर आकर्षित किया । उसी समय महात्मा गाँधी ने गीता को अपनाकर अपने जीवन से जोड़ कर नया रूप दे दिया । वैसे महाभारत में कई गीताएँ है परन्तु इस गीता को अधिक महत्व प्राप्त हुआ । महाभारत की रचना आज से पाँच हजार वर्ष पूर्व महर्षि व्यास ने किया था । जो आज बहुत बड़े ग्रंथ का रूप ले चुका है । महाभारत के भाष्य कई संस्कृत वेत्ताओं ने किया है परन्तु गीता का भाष्य तो संस्कृत, हिन्दी, अंग्रेजी एवं अन्य भाषाओं में भी किया गया । भारतवर्ष के अनेक दार्शनिकों ने भी गीता पर भाष्य करके अपने-अपने विचारों को सिद्ध करने का प्रयास किया । शंकराचार्य जी ने जहां अद्वैतवादी दार्शनिक सिद्धान्त को, रामानुज ने विशिष्टाद्वैतवादी दार्शनिक सिद्धान्त को और निम्बार्काचार्य ने अपने द्वैताद्वैतवादी दार्शनिक सिद्धान्त एवं अन्य ने अनेक सिद्धान्तों को गीता से प्रतिपादित करने का प्रयास किया है । गीता उक्त विचारकों को क्रीड़ा स्थली बन गई । गीता को हम दार्शनिक पहेलियों का सम्मिश्रण कह सकते हैं । या कह कहें कि गीता एक दर्पण है जिसमें प्रत्येक दार्शनिक अपना ही चित्र देखता है । यह गुण है या अवगुण यह निर्णय आप विचारकों के बुद्धि विवेक पर है । परन्तु यह सत्य है गीता वैदिक धर्म की कसौटी पर वैदिक ग्रंथ सिद्ध नहीं होता ।

वैदिक धर्म तर्क और विज्ञान की कसौटी पर मूल्यांकन करता है, जो इस कसौटी पर खरा है वही सत्य है । वैदिक धर्म ने संसार के साहित्य को तीन भागों में बाँट रखा है । १-स्वतः प्रमाण, २-परतः प्रमाण, ३-समस्त भारतीय एवं पाश्चात्य अन्य ग्रंथ ।

उपर्युक्त कसौटी पर हम गीता का विश्लेषणात्मक मीमांसा करते हैं कि गीता किस श्रेणी का ग्रंथ है।

१. स्वतः प्रमाण — जिससे आप प्रत्यक्ष रूप में जीवन के आध्यात्मिक तत्वों का ज्ञान ग्रहण कर सकते हैं इस कोटि में वेद ही माने जाते हैं और वह भी केवल मंत्र संहिता अर्थात् ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद तथा अथर्ववेद ।

२. परतः प्रमाण — इस कोटि में षट्दर्शन, उपनिषद्, मनुस्मृति तथा ऋषि दयानन्द जी के ग्रंथ हैं । जो वेदानुकूल होने से मान्य है ।

३. समस्त भारत एवं पाश्चात्य के साहित्य — इस कोटि में बहुत से उत्कृष्ट कुछ साधारण और अनेक त्याज्य हैं ।

प्रश्न यह है कि गीता इनमें से किस कोटि में है ? मेरा विचार है कि गीता पहली दो कोटियों में से किसी में नहीं आती । न स्वतः प्रमाण है न परतः प्रमाण, इन दो कोटियों को अलग रख दिया जाय तो गीता साहित्य का उत्कृष्ट ग्रंथ कहा जा सकता है ।

महर्षि दयानन्द जी महाराज ने सत्यार्थ प्रकाश के अष्टम समुल्लास में गीता के एकमात्र श्लोक का उद्धरण दिया है । वह लिखते हैं — ''जो जिससे उत्पन्न होता है वह कारण और जो उत्पन्न होता है वह कार्य और जो कारण को कार्य बनाने हारा है वह कर्त्ता कहाता है ।''

नासतो विद्यते भावो नाभावो विद्यते सतः।
उभयोरपि दृष्टोऽन्तस्त्वनयोस्तत्त्वदर्शिभिः।।

श्रीमद् भगवद्गीता।। अ० २। श्लोक १६।

"कभी असत् का भाव वर्तमान और सत् का अभाव अवर्तमान नहीं होता । इन दोनों का निर्णय तत्वदर्शी लोगों ने जाना है ।"

परन्तु इसके अतिरिक्त उन्होने अन्यत्र गीता का कोई उद्धरण अपने ग्रंथों में नहीं दिया । न ही गीता की अपनी रचनाओं में पठनीय माना उक्त श्लोक भी वैशेषिक दर्शन पर आधारित है ।

यहां हम देखते हैं कि गीता के सभी अध्यायों का मिलान किया जाये तो परस्पर विरोधी दृष्टि मिलेगी । वर्तमान गीता में अध्याय के अध्याय पुनरुक्त दिखलाई पड़ते हैं । ऊपर दार्शनिक विचारकों के परस्पर विरोधी विचार दिये गये हैं । गीता उपनिषदों के आधार पर खड़ी की गई है जब कि उपनिषदों का स्थान और महत्व गीता से बहुत ही अधिक है । गीतावादियों ने गीता को वेदों का सार तक कहने का दुःसाहस कर डाला है । जब कि गीता में वेद विरुद्ध बहुत से विचार बड़ी चालाकी से समाहित किये गये हैं । यद्यपि गीता में "वेदानां सामवेदोऽस्मि" से वेद की प्रशंसा यदि मिलती है तो वहीं पर—

"त्रैगुण्यविषयावेदा निस्त्रैगुण्यो भवार्जुन" तथा "पावानर्थ उदपानें सर्वतः संप्लुतोदके । तावन सर्वेषुवेदेषु ब्राह्मणस्य विजानतः" आदि श्लोको में वेद केवल त्रैगुण्य का वर्णन करते हैं — यह कहना सुतराम असंगत तथा मिथ्या है । वेद की यह निन्दा ही मानना होगा । वेद से ही अध्यात्म का ज्ञान भी निःस्पूत हुआ है इसका सर्वोत्तिम भण्डार भी वेद ही है । वेद तो ज्ञान-विज्ञान का अगाध समुद्र है । उसके जाने बिना 'विजानतः' पद का कोई महत्व नहीं रह जाता है, वेदों में वर्णित आत्मा, परमात्मा तथा जगत का दर्शन, उपनिषदों में आया जो गीता से पूर्व की रचनाएं हैं वहीं से गीता में लेकर वर्णन किया गया। आत्म विद्या के भण्डार वेद हैं । "वेदवादरतः पार्थनान्ददस्तीति वादिनः" श्लोक में भी वेद के प्रति अनादर की भावना मिलती है । वेद वस्तुतः केवल कर्मकाण्ड का वर्णन नहीं करते । उनमें अध्यात्म और दैवत ज्ञान एवं इस प्रकार के समस्त विद्याओं के वेद ही आदि स्रोत है । वेद के प्रति गीता की यह भावना ठीक नहीं है । वर्तमान में एकमत सा खड़ा हो गया है जो गीता के नाम पर वेद एवं शास्त्रों का अवहेलना कर रहा है । यह लोग गीता के अतिरिक्त किसी भी अन्य सद्ग्रन्थों को महत्व नहीं देते । परन्तु यह बिलकुल गलत मार्ग है । वेद, दर्शन तथा उपनिषदों के समक्ष गीता का स्थान साधारण है अथवा नगण्य है वेदादि के समक्ष गीता की तुलना ही अनुचित है । वेद को अपरा विद्या कहकर गीता को पराविद्या का ग्रंथ बतलाते हैं । गीता में कोई भी ऐसी परा विद्या नहीं है जो उपनिषद से न आई हो । उपनिषदें वेद से लेकर ही पराविद्या का वर्णन करती है । परा विद्या से तात्पर्य है कि जिससे अक्षर-ब्रह्म का ज्ञान होता है । यह ज्ञान भी वेद में वर्णित है । वेद से ही अक्षर का ज्ञान होता है । वेद में सर्वत्र ओ३म् का वर्णन मिलता है फिर वेद अपरा विद्या कैसे हो सकता है । वेद में परा तथा अपरा दोनों विद्या का वर्णन है । योगिराज श्रीकृष्ण वेदज्ञ थे वे कभी भी वेद विरुद्ध बातें नहीं कह सकते । गीता के वेद विरुद्ध श्लोक तो भगवान श्री कृष्ण का अपमान करने वाले हैं ।

प्रसिद्ध दो श्लोक जिसे श्रीकृष्ण महाराज ने रणक्षेत्र में अर्जुन को उपदेश दिया था — म्रियते वा कदाचिन्०।। तथा य एनं वेत्ति हंतारम् यश्चैनं मन्यते हतम् ।

यह कथन अवश्य ही रणक्षेत्र के ही योग्य है । क्योंकि वीर सिपाही को रणक्षेत्र में मृत्यु से नहीं डरना चाहिए क्योंकि जीव मरता नहीं । परन्तु सर्वसाधारण यदि इसे जीवन का अंग बना लें कि कौन किसको मारता है । जीव तो अजर अमर है । तो संसार में हत्या और हिंसा की सीमा न रहे । संसार को यह बताने की आवश्यकता है कि जीव मरता नहीं लेकिन पीड़ित और दुःखी तो होता ही है । हजारों कसाई प्रतिदिन करोड़ों पशु पक्षियों तथा जलचरों की हत्या करते हैं और कहते हैं कि कौन किसको मारता है ? जीव तो अमर है । दो प्रवृत्तियाँ भिन्न-भिन्न हैं रणक्षेत्र की प्रवृत्ति तथा सामान्य नागरिक जीवन की प्रवृत्ति । इन दोनों प्रवृत्तियों को ठीक से समझना होगा, नहीं तो संसार में मानवता का बहुत अहित होगा । निष्कर्षतः गीता ईश्वर के अवतारवाद का पोषक है । श्रीकृष्ण की महिमा एवं ईश्वरावतार की स्थापना करना गीता का उद्देश्य है । गीता की किसी भी प्रकार तुलना वेद से नहीं की जा सकती । वैदिक संस्कृति के वेद अमूल्य रत्न हैं जो हमारे राष्ट्रीय ग्रंथ हैं । मानव के ज्ञान-विज्ञान के विकास, उत्थान तथा कल्याण के सुख स्तम्भ एवं मेरुदण्ड हैं । गीता में वह गुण नहीं जो राष्ट्रीय ग्रंथ बन सके ।

म० न० २४७५-निराला नगर,
शिवपुरी, सुलतानपुर (उ०प्र०)

हिण्डौन सिटी में चार आर्य विद्वानों का सम्मान

हिण्डौन सिटी — सन् १९८३ से आर्य विद्वानों को सम्मानित करने के क्रम में इस वर्ष श्री घूडमल प्रहलादकुमार आर्य धर्मार्थ न्यास, हिण्डौन सिटी (राज०) द्वारा तीन आर्य विद्वानों का भावभीना सम्मान किया गया ।

बत्तीसवाँ श्री घूडमल प्रहलादकुमार आर्य साहित्य सम्मान आचार्य डॉ० श्री रामनाथ वेदालङ्कार के पुत्र श्री विनोदचन्द्र विद्यालङ्कार, ज्वालापुर, तृतीय वेदरत्न स्वामी जगदीश्वरानन्द सरस्वती साहित्य सम्मान श्री सोमदेव शास्त्री, मुम्बई, प्रथम आचार्य डॉ० रामनाथ वेदालङ्कार साहित्य सम्मान उड़िया-अंग्रेजी के लेखक श्री प्रियव्रतदास, भुवनेश्वर को तथा प्रथम श्री हरगोविन्द सत्यवती आर्या न्यास द्वारा प्रथम श्री हरगोविन्द सत्यवती आर्या स्मृति सम्मान श्री ब्रजपाल शर्मा कर्मठ, कम्हेडा को छह प्रान्तों से आये आर्य जनों की श्रद्धापूर्ण अभिव्यक्ति के मध्य भेंट किया गया । आप चारों को पुष्पमालाओं से प्रतिनिधियों ने लाद दिया ।

सम्मान के अन्तर्गत प्रत्येक को २१०००/- एक्कीस सहस्र रुपये की राशि, शाल, मोतियों की माला तथा चित्तौड़गढ़ (राज०) के विजय स्तम्भ की प्रतिकृति भेंट की गई । विद्वानों ने अपने उद्‌गारों में इसे देव दयानन्द की दृष्टि का सम्मान मानते हुए आभार व्यक्त किया ।

– श्री प्रभाकरदेव आर्य

गृहसूत्रों की उपादेयता ?

- श्री उदयन आर्य

वेदों की पठन-पाठन परम्परा का निर्वहन करने के लिए गृह्यसूत्रों की महत्वपूर्ण आवश्यकता है। गृह्य का अर्थ गृहस्थ से सम्बन्धित है अर्थात् गृहस्थ में क्या कर्म करणीय हैं ? क्या अकरणीय हैं ? इन सबका विशेष रूप से दिग्दर्शन किया गया है। परन्तु हमें इन्हीं गृह्यसूत्रों का विशेष अध्ययन करने पर कभी-कभी वेद विरुद्ध बातें भी देखने को मिलती हैं। इसके समाधान में शोधार्थी यही कहना चाहेगा कि गृह्यसूत्र में हर बात को प्रमाण रूप में स्वीकार नहीं करना चाहिए। मेरे द्वारा अध्ययन किये जाने पर ऋग्वेदीय गृह्यसूत्रों में कहीं-कहीं पर गृह्यसूत्रकार तत्कालीन परम्परा का केवल मात्र वर्णन करते हैं तथा कहीं-कहीं अन्य आचार्यों के मतों का भी वर्णन करते हैं। जैसे – ऋग्वेदीय गृह्यसूत्र में वपा शब्द का प्रयोग मिलता है। व्याख्याकारों ने यहाँ वपा शब्द का अर्थ पशु की चर्बी किया है। पशु की चर्बी को अग्नि में आहुति करने से वायु, जल और वातावरण में जो प्रदूषण होगा वह यज्ञीय नहीं हो सकता। परन्तु 'वाहवपाम् जातवेदा' इस मन्त्र को समझना जरूरी है। बिना देवता के मन्त्र का अर्थ तर्कसंगत नहीं हो सकता। क्योंकि देवता वर्ण्यविषय होता है। इस मन्त्र का देवता जातवेदा है। इसका अर्थ हुआ जातानि यो वेद अथवा जातानि व एनं विदुः निरुक्तकार की इस व्याख्या के अनुसार ज्ञानी व्यक्ति जातवेदा है। उसके लिए वपा के वहन का निवेदन वेद मन्त्र में किया गया है।

वैदिक पद यौगिक होते हैं। वपा शब्द पाणिनि व्याकरण के अनुसार 'डुवप् बीज सन्तानें' धातु से बनता है तो उप्यते या यया यस्यां वा सा वपा इस दृष्टिकोण से अन्न अथवा खेत का नाम वपा है। अतः इस मन्त्र में वपा शब्द से अन्न का ही ग्रहण करना उचित है। स्वामी दयानन्द सरस्वती ने इस मन्त्र में वपा का अर्थ भूमि किया है जो कि व्याकरण और निरुक्त वेदांगों के अनुकूल है। यज्ञीय पवित्र कर्मकाण्ड के भी अनुकूल है। अतः यहाँ वपा शब्द का अर्थ चर्बी करना कथमपि उचित नहीं हो सकता। आर्ष गृह्यसूत्रों में आश्वलायन, सांख्यायन, कौषितकी आते हैं। ध्यातव्य है कि तत्कालीन परम्परा में वपा शब्द का अर्थ चर्बी किया गया है और बहुधा गृह्यसूत्रकार चर्बी अर्थ ही स्वीकार करते हैं। मेरा मानना है कि सूत्रकार केवल मात्र तत्कालीन परम्परा का निर्देशन करते हैं न कि प्रमाणित। जैसे – अन्य उदाहरण गृह्यसूत्रों में वर्णित है।

जो श्राद्ध की पद्धति है उस पद्धति में कौन-सी पद्धति क्यों की जा रही है। जैसे :- जल पात्र में तिल डालकर ब्राह्मणों के हाथ में देना। उस जल को ब्राह्मण क्या करेंगे ? ऐसा कुछ भी उल्लेख नहीं है। गृह्यसूत्रों में कहा गया है कि ब्राह्मणों के कर लेने पर पिण्ड दान करें। प्रश्न है कि पिण्ड क्या है ? किस चीज से निर्मित है ? पिण्ड का उद्देश्य क्या है ? शास्त्रीय परम्परा में पिण्ड शरीर का नाम है। 'यथा पिण्डे तथा ब्रह्माण्डे' अपने पितरों के आज्ञा में अपने पिण्डों को मनसा, वाचा, कर्मणा, समर्पित कर देना ही वस्तुतः पिण्ड दान है परन्तु यहाँ इस प्रकार का कोई स्पष्टीकरण नहीं किया गया है। इसी प्रसंग में आगे लिखते हैं कि पिण्ड से अवशिष्ट अन्न को ब्राह्मणों को ही दे देना चाहिए। इस वर्णन

से सिद्ध होता है कि सूत्रकार पिण्ड का मतलब अन्न से बना हुआ पिण्ड ऐसा करते हैं ।

अब पुनः प्रश्न होता है कि जब पूर्ण भोजन हो चुका हो तब उन पिण्डों को ब्राह्मण कैसे खायेंगे ? पिण्ड भी ३,५ या ७ है तो भोजन से तृप्त ब्राह्मण इन पिण्डों को किस उदर में सेवन करेंगे ? इत्यादि उदाहरणों से प्रतीत होता है कि गृह्यसूत्रकार ना तो अपने मन्तव्य का वर्णन कर रहे हैं । अपितु तत्कालीन समाज के परम्पराओं का केवलमात्र वर्णन कर रहे हैं । इसी कारण से बहुत सारी अन्ध परम्पराओं का वर्तमान में भी प्रचलन है और यह सब कहीं न कहीं गृह्यसूत्रों का परिणाम है । अतः गृह्यसूत्र के अध्ययन करते समय विशेष अवधान देना चाहिए तथा हर बात वेदानुकूल ही होनी चाहिए । क्योंकि वेद स्वतः प्रमाण है तथा अन्य ग्रंथों को वेद के प्रमाण की आवश्यकता पड़ती है ।

यदि कोई ग्रंथ वेदानुकूल है तो स्वीकरणीय है अन्यथा स्वीकरणीय नहीं है । जिन महानुभावों को इस प्रकार के लेखों पर आपत्ति होती है उन्हें एक बार अवश्य ही गृह्यसूत्रों को पढ़ लेना चाहिए और अध्ययन करते समय पूर्वाग्रह से ग्रसित नहीं होना चाहिए । मेरा तात्पर्य यह नहीं है कि गृह्यसूत्र उपयोगी नहीं है परन्तु इनमें अच्छे प्रसंगों का भी वर्णन मिलता है । जैसे — यज्ञकर्म के समापन पर ब्राह्मणों को भोजन भी अवश्य कराना चाहिए । इस प्रसंग में लिखते हैं कि ब्राह्मण वाणी रूप वय श्रुत, शील और चरित्र इन गुणों से युक्त होना चाहिए । शाङ्खायन कहते हैं कि इन सब गुणों में भी श्रुत गुण सर्वातिशायी है । इस गुण का अतिक्रमण नहीं करना चाहिए । यहाँ अत्यन्त स्पष्ट है कि वेद विद्या विद् चरित्र से अतिनिर्मल सुन्दर शीलवान् ब्राह्मणपद वाच्य है ब्राह्मणत्व में जन्म कारण नहीं है । वर्तमानकाल में जाति व्यवस्था के अन्तर्गत ब्राह्मण कुल में उत्पन्न अनधीत व्यक्ति भी जिस तरह से ब्राह्मण पद वाच्य है ।

यह शाङ्खायन को स्वीकार नहीं है । जाति व्यवस्था के कारण ब्राह्मणत्व प्राप्त व्यक्ति सामाजिक सौजन्य के कारण नहीं बन सकते । अतः वेद विद् ब्राह्मण ही भोज्य सत्कारी है । इस प्रकार से अन्य उदाहरणों का दिग्दर्शन गृह सूत्रकार वेद विद् को ही ब्राह्मण संज्ञा देते हैं । परन्तु वर्तमान में जिस तरह से जाति व्यंवस्था का स्वरूप दिखाई देते हैं । वह कहाँ तक उचित है ? ऋग्वेदीय गृह सूत्रों में विभिन्न प्रकार के करणीय और अकरणीय कर्मों का निदर्शन मिलता है ।

पाद टिप्पणी :-

१. **वाहवपाम् इति मन्त्रे पशुरेव दृश्यते तस्मात् इह दर्शनात्, गोपशु अजो वा पशु स्यात्** कौषीतकि गृह्यसूत्र ०३/१५/०४

२. दृष्टव्य यजुर्वेद भाष्य महर्षि दयानन्द अध्याय ३५/२०

३. वाग्रुपवयः श्रुतशील वृत्तानि गुणाः शाङ्खायनगृह्यसूत्र १/२/२

४. श्रुतं सर्वानत्येति शाङ्खायनगृह्यसूत्र १/२/३

५. न श्रुतमतीयात् शाङ्खायनगृह्यसूत्र १/२/४

गुरु विरजानन्द संस्कृत महाविद्यालय
गुरुकुल करतारपुर जालन्धर
पिन-१४४८०१ (पंजाब)

८७वें बलिदान दिवस (१७-११-२०१५) पर विशेष

भारतीय स्वाधीनता संग्राम के अपराजेय योद्धा पंजाब केसरी लाला लाजपत राय

- प्रो० ओमकुमार आर्य - उपमंत्री

आर्य प्रतिनिधि सभा, हरियाणा

भारतभूमि आदिकाल से ही रत्नगर्भा एवं वीर-प्रसू भूमि रही हैं । यहाँ प्रत्येक युग में जनता जनार्दन के अधिकारों के रक्षक, राष्ट्र के स्वाभिमान के सजग प्रहरी एवं अन्यायकारी तथा आततायियों के विरूद्ध खम ठोंककर निर्भीकता पूर्वक लोहा लेने वाले और अंततः अत्याचारियों को करारी शिकस्त देने वाले जुझारू योद्धा पैदा होते रहे हैं । हमारा अब तक का पूरा इतिहास ऐसे ही वीरों की शौर्यगाथाओं से भरा पड़ा है । सतयुग के मान्धाता, त्रेता के मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान् राम, द्वापर के योगेश्वर श्रीकृष्ण वर्तमान युग के महाराज चंद्रगुप्त, महाराणा प्रताप, छत्रपति शिवाजी, गुरु गोविन्द सिंह, महारानी झाँसी, राजा नाहर सिंह, सारे के सारे क्रांतिकारी, नेताजी सुभाष चन्द्र बोस, पंजाब केसरी लाला लाजपत राय आदि सभी उसी शौर्य श्रृंखला की चमकती दमकती कड़ियाँ हैं, आभायुक्त, जाज्वल्यमान् हस्ताक्षर हैं जिन पर हम सबको नाज है, और होना भी चाहिये । इस लेख के चरितनायक हैं पंजाब केसरी लाला लाजपत राय, जिनका ८७वां बलिदान दिवस है १७ नवम्बर २०१५ जिन्होंने अपनी सिंह गर्जना से, लेखनी से क्रांतिकारी कार्यों से ब्रिटिश सरकार की चूलें हिलादी थीं जिसके परिणामस्वरूप ही १५ अगस्त १९४७ को गोरी हुकूमत को अपना बोरिया बिस्तर समेट कर भारत से भागना पड़ा था । भारतीय स्वाधीनता का पथ प्रशस्त करने वालों में इस लेख के चरित-नायक, स्वाधीनता संग्राम के महानायक ही नहीं बल्कि अपराजेय योद्धा पंजाब केसरी लाला लाजपत राय का नाम उल्लेखनीय ही नहीं अपितु अग्रगण्य है । उनके जीवन और कार्य, व्यक्तित्व और कृतित्व तथा समाज एवं राष्ट्र के लिये की गई उनके द्वारा महती सेवा पर विस्तारपूर्वक विचार करने के लिये तो हजारों-हजारों पृष्ठ भी कम पड़ेंगे, वाणी द्वारा बतायें तो महीने नहीं साल लग जायेंगे फिर भी उनके ऐतिहासिक कार्य की एक संक्षिप्त सी झलक आगामी चन्द पन्नों में प्रस्तुत करने का विनम्र प्रयास कर रहा हूँ ।

आपका जन्म २८ जनवरी १८६५ को वैश्य परिवार में अपने ननसाल के गांव ढुडिके में हुआ था। आपका पितृ गाँव जगरांव था । आप अपने माता पिता की सबसे बड़ी संतान थे । आपके पिता मुंशी राधाकिशन पेशे से शिक्षक थे तथा इस्लाम से प्रभावित थे । माता जी सिख परिवार से थीं जो बहुत ही धर्म-परायण महिला थीं और उनकी हिन्दू धर्म में पूर्ण आस्था थी । उन दिनों हिन्दू-सिख वास्तव में ही खून के रिश्ते से भाई भाई थे, एक ही परिवार में केशधारी अर्थात् सिख और मोने अर्थात् हिन्दू बड़े प्रेम प्यार से रहते थे । यह तो बाद में संकीर्ण विचारधारा के और घटिया राजनीति करने वालों ने अपने निहित स्वार्थों के चलते हिन्दू-सिख में दूरियाँ पैदा कर दीं जिनका बहुत ही घातक परिणाम पंजाब की धरती को उग्रवाद और आतंकवाद के रूप में झेलना पड़ा । किन्तु हमारे महापुरुषों की परम्परा साक्षी

है कि कोई कितना भी जोर लगाले हिन्दू-सिख कभी अलग-अलग नहीं किया जा सकते । लाला लाजपत राय का परिवार भी इसी एकता का सबल प्रमाण और प्रतीक है ।

आपकी मिडिल तक की शिक्षा गाँव में हुई, फिर आप लाहौर आ गये । कुछ समय दिल्ली भी रहे । पिताजी के स्थानान्तरण के कारण आप भी एक जगह टिक कर अध्ययन नहीं कर पाये । सन् १८८० में आपने लाहौर के राजकीय महाविद्यालय में प्रवेश लिया । वहीं से १८८२ में मुख्तारी की परीक्षा उत्तीर्ण की तथा तत्पश्चात् जगराँव में आकर वकालत प्रारम्भ की । महान् प्रतिभा के धनी, आर्य समाज के दिग्गज विद्वान् पं० गुरुदत्त विद्यार्थी (१८६४-१८९०) और महर्षि के अनन्य भक्त, डी.ए.वी. के प्रथम अवैतनिक मुख्याध्यापक (१८८६-१८८९) और तदुपरान्त प्रथम अवैतनिक प्राचार्य (१८८९-१९१२) त्यागमूर्ति महात्मा हंसराज (१८६४-१९३८) आपके कॉलेज के सहपाठी थे । लाजपत और हंसराज तो जीवनयात्रा में काफी लम्बे समय तक साथ-साथ चले किंतु महान् मनीषी पं० गुरुदत्त तो अत्यन्त अल्पायु में (मात्र २६ वर्ष) ही इस संसार से विदा हो गये । राष्ट्रसेवा के अन्य कार्यों के अतिरिक्त डी.ए.वी. की स्थापना इन तीनों का सांझा सपना था, स्थापना हुई, किन्हीं कारणों के चलते पं० गुरुदत्त पृथक् हो गये, लालाजी राजनीति में व्यस्त हो गये किंतु महात्मा हंसराज आजीवन प्रत्यक्षतः (१९१२ तक) और परोक्षतया (१९१२ से १९३८ तक) अपने प्रिय डी.ए.वी से जुड़े रहे । किंतु डी.ए.वी के संदर्भ में भी इन तीनों महापुरुषों का योगदान अनुकरणीय ही नहीं ऐतिहासिक और अपनी मिसाल आप है ।

किंतु हमें तो ध्यान केन्द्रित करना है लाला लाजपत राय के उन क्रांतिकारी कार्यों पर, अंग्रेजों के विरूद्ध किये गये उस निर्भीक शंखनाद पर, देश की आजादी के लिये झेली गई उन यातनाओं पर जिनके कारण वे पंजाब केसरी कहलाये और स्वाधीनता संग्राम के अदम्य, अपराजेय योद्धा के रूप में जाने गये । किंतु उससे पहले उनके जीवन विषयक थोड़ी सी और जानकारी लेना आवश्यक है । उन्होंने १८८२ में मुख्तारी की परीक्षा तो पास कर ली किंतु वकालत की परीक्षा पास करना अभी बाकी था । ३० अक्टूबर १८८३ (दीपावली पर्व के दिन) को महर्षि का निर्वाण हुआ, लालाजी को बहुत बड़ा आघात लगा । आर्य समाज लाहौर में स्वामी जी के देहावसान के उपरान्त एक शोकसभा का आयोजन किया गया जिसके मुख्य वक्ता १९ वर्षीय युवक लाजपत राय थे और उसी दिन से युवक लाजपत एक कुशल, ओजस्वी वक्ता के रूप में अपनी छाप, गहरी और गहरी, अंकित करते चले गये ।

सन् १८८३ समाप्त हुआ, १८८४ में वे रोहतक आ गये । वकालत की परीक्षा की तैयारी की, जीविकोपार्जन के लिये भी प्रयासरत रहे, आर्य समाज की गतिविधियों में बढ़ चढ़कर भाग भी लेते रहे। पूरा १८८४ और फिर १८८५ डी.ए.वी. के लिये धन-संग्रह करने में चला गया । कुछ समय निकालकर वकालत की परीक्षा के लिये तैयारी भी करते रहे, १८८६ में उनकी मेहनत रंग लाई, वकालत की परीक्षा में शानदार सफलता प्राप्त हुई और वे वकालत के लिये हिसार आ गये, जहाँ १८९२ तक रहे ।

हिसार उनका प्रथम कर्मक्षेत्र था जहाँ वे सामाजिक क्षेत्र में न केवल प्रविष्ट हुये बल्कि पूरी तरह स्थापित हो गये। वहाँ आर्य समाज नागौरी गेट की स्थापना उनके कर कमलों से हुई। आज चौ० हरिसिंह जी सैनी, पूर्व मंत्री हरियाणा सरकार और उनके अन्य बहुत ही आस्थावान सदस्यों के सत्प्रयासों के फलस्वरूप उस स्थान पर अत्यन्त भव्य आर्य समाज मंदिर का निर्माण हो गया है। इस भवन की भव्यता लालाजी के भव्य व्यक्तित्व के एकदम अनुरूप है। आर्य समाज लाजपत चौक हिसार (पूर्व में नागौरी गेट हिसार) एक ऐतिहासिक आर्य समाज है और लालाजी की याद में बना एक भव्य स्मारक भी। लालाजी एक मेहनती, भरोसेमन्द, ईमानदार, सत्य के पक्षधर सफल अधिवक्ता थे, उनकी आय हजारों में थी, जो आज के हिसाब से लाखों में कही जा सकती है। यहाँ आज की युवा पीढ़ी नोट करे कि लालाजी ने अपने माता-पिता की सेवा, उनके आराम, सुख सुविधा का सदा पूरा ध्यान रखा। अपने पिता से सर्विस (अध्यापकी) छुड़वा दी और उनके नाम इतना पैसा जमा करवा दिया कि उस पैसे के ब्याज मात्र से उनका निर्वाह अच्छे से होता रहा। वैदिक मान्यता के अनुसार जो पितृयज्ञ और जीवित माता-पिता का श्राद्ध कहा जाता है, वही यज्ञ लालाजी ने प्रत्यक्षतः करके दिखाया, वे ठोस कार्य में विश्वास रखते थे, महज जुबानी जमा खर्च उन्हें कतई पसन्द नहीं था ?

हिसार ने उनको सब कुछ दिया किंतु उनकी प्रतिभा, विविध प्रकार की अद्भुत क्षमताओं के सम्यक् विकास और उपयोग के लिये हिसार बहुत ही सीमित और अपर्याप्त कार्यक्षेत्र था और साथ ही अब मुख्य न्यायालय में वकालत करने के लिये जो पांच साल के अनुभव की शर्त थी वह भी पूरी हो गई, अतः आगे की वकालत के लिये १८९२ में वे लाहौर आ गये और लाहौर ने अपने प्रिय नेता को स्थानीय क्षेत्रीय, प्रांतीय स्तर से ऊपर उठाकर राष्ट्रीय स्तर का ही नहीं बल्कि विश्व-स्तरीय नेता बना दिया।

कांग्रेस की स्थापना १८८५ में हो चुकी थी, महर्षि दयानन्द के अमरग्रन्थ **सत्यार्थप्रकाश** से प्रेरणा लेकर देशभक्त नौजवान अंग्रेजों से दो-दो हाथ करने की तैयारी कर रहे थे। यह कटु सत्य है कि अपनी स्थापना (१८८५) से लेकर बंग-भंग तक (बंगाल का विभाजन १९०५) पूरे बीस साल कांग्रेस कभी पूर्ण स्वराज्य की मांग नहीं कर सकी, ब्रिटिश राज और ताज का गुणगान करने तक सीमित रही। यह श्रेय तो बाल-पाल-लाल की त्रिमूर्ति या यूं कहें कि राष्ट्रीय त्रिदेव (बाल गंगाधर तिलक, लाला लाजपत राय, विपिन चंद्र पाल) को जाता है कि उन्होंने अपनी पार्टी की मिमियाहट, गिड़गिड़ाहट, अंग्रेज भक्ति के स्वर को सिंह गर्जना में बदल दिया, पूर्ण स्वाधीनता की स्पष्ट घोषणा की और क्रांति की ऐसी ज्वाला भड़का दी जिसकी धू-धू करती लपटों ने दासता की जंजीरों को पिघला दिया, जलाकर भस्म कर दिया और १५ अगस्त १९४७ को ब्रिटिश साम्राज्य के सूर्य को सदा के लिये अस्त करके स्वतंत्रता का शुभ सूर्योदय इस पावन धरती पर कर दिया। यह संभव इसलिये हो सका क्योंकि देश को आजाद करवाने वाले सभी जांबाज अपनी जान हथेली पर रखकर स्वाधीनता समर में कूदे थे जिनमें अदम्य, अकम्प, अविचल साहस के धनी, अपराजेय योद्धा पंजाब केसरी लाला लाजपत राय एक थे। वे मानते थे कि

अहिंसा का अपना स्थान है, अहिंसा अध्यात्म, भक्ति, साधनादि के लिये तो आवश्यक है किंतु समरांगण का और अहिंसा का कोई मेल नहीं है —

''निस्तेज अहिंसा और स्वातंत्र्य-समर का कोई मेल नहीं है ।

स्वातंत्र्य समर है अलग चीज बच्चों का खेल नहीं है ॥''

१९०७ हमारे प्रथम स्वतंत्रता संग्राम (१८५७) का अर्द्धशताब्दी वर्ष था । अंग्रेज लालाजी से डरा हुआ था, कायर फिरंगी ने १८१८ के अधिनियम-III के तहत लालाजी को ९ मई १९०७ को लाहौर से गिरफ्तार किया, वहाँ से कलकत्ता । डायमण्ड हार्बर पहुंचाया, फिर स्टीमर से १५ मई १९०७ को रंगून और १६ मी १९०७ को माण्डले ले जाया गया । वे लगभग ६ महीने कुछ दिन माण्डले के किले में नजरबन्द रहे, नवम्बर १८, १९०७ को वे रिहा होकर लाहौर अपने घर पहुंचे । माण्डले जेल में रहते उन्होंने कई पुस्तकें लिखीं, जो ज्यादातर उर्दू में थीं । उन्होंने अपनी अंग्रेजी पुस्तक —

Story of Deportation में माण्डले कारावास के कई खट्टे, मीठे किंतु रोचक अनुभव एवं संस्मरण लिखे हैं । धर्मवीर - पं० लेखराम आर्य मुसाफिर कहा करते थे कि हमारी तकरीर (व्याख्यानादिसे प्रचार) और तहरीर (लेखनी से) कभी बन्द नहीं होनी चाहिये । लाला लाजपत राय पर यह कथन पूर्णतः लागू होता है यदि वे जेल में होते तो उनकी अंगारे उगलने वाली लेखनी सतत् चलती रहती बाहर होते तो लेखनी के साथ-साथ उनकी ओजस्विनी वाणी भी विचारों से आंदोलन, तूफान झंझावातों को जन्म देती रहती । वे जनता के नेता थे, जन-जन के हृदय सम्राट थे, उनकी दहाड़ से अंग्रेज कांपता था, इसीलिये तो जनता-जनार्दन ने उन्हें पंजाब केसरी (शेरे पंजाब) की उपाधि दी थी । उन्होंने दारुण यातनायें हंस-हंस कर सहीं ।

'सीस दिया पर सी न उचरी' वाला कथन उन पर शब्दशः चरितार्थ होता है । फिरंगी की लाठी, गोली, फांसी से वे कभी नहीं डरे, वास्तव में ही वे निडरता, शौर्य, बलिदान भावना के साकार रूप थे, क्रांति-पथ के स्वाधीनता संग्राम के अपराजेय योद्धा थे ।

वे अपनी प्रिय मातृभूमि की आजादी के लिये देश के भीतर और बाहर विदेश में भी अंग्रेजों के विरुद्ध जबरदस्त आंदोलन खड़ा करना चाहते थे । इसीके मद्देनजर उन्होंने इंग्लैण्ड, अमरीका, पुनः इंग्लैण्ड और जापान की यात्रा की । लंबा समय विदेश में बिताया १९१४ में वे बाहर गये थे और फरवरी १९२० में स्वदेश लौटे थे । इस दौरान उन्होंने —

Young India / तरुण भारत, England's Debt to India / इंग्लैण्ड का भारत के प्रति ऋण The Political Future of India / भारत का राजनैतिक भविष्य ।

Fight for Country / देश के लिये संघर्ष आदि प्रसिद्ध पुस्तकें लिखी थीं ।

धीरे-धीरे करते आ गया ३० अक्तूबर १९२८ का दिन जब साईमन कमीशन लाहौर पहुंचा था और लालाजी के नेतृत्व में अपार जन सैलाब लाहौर की सड़कों पर उमड़ पड़ा था । जन-सैलाब साईमन कमीशन वापस जाओ, साईमन कमीशन मुर्दाबाद आदि के गगनभेदी नारे लगाकर कमीशन का विरोध

कर रहा था । सब शांतिपूर्वक चल रहा था किंतु दमनकारी अंग्रेज सरकार ने एक सोची समझी चाल के तहत बिना किसी कारण के प्रदर्शनकारियों पर निर्मम लाठी चार्ज का आदेश दे दिया । मुख्य निशाना लालाजी थे । अस्वस्थता के बावजूद पंजाब का यह सिंह-सपूत लाठियाँ झेलता रहा, दमनकारियों के विरुद्ध बहुत ही धैर्यपूर्वक मोर्चा सम्हालता रहा । बेहोश होकर गिर गया, जैसे तैसे लोगों ने उनको बचाया, किंतु शाम होते-होते फिर लाहौर के मोरी गेट पर आयोजित एक विशाल जनसभा में शेरे पंजाब की ब्रिटिश सरकार को भय से कंपा देने वाली दहाड़ सुनाई दी –

''मेरे शरीर पर पड़ी हुई एक-एक लाठी ब्रिटिश सरकार के कफन की कील सिद्ध होगी ।'' इतिहास साक्षी है कि उनकी सिंहगर्जना का एक-एक शब्द १५ अगस्त १९४७ को सत्य साबित हुआ, अर्थात् ब्रिटिश-राज्य का सूर्यास्त, स्वतंत्रता का सूर्योदय । लेकिन लाठियों की अगणित चोटों ने पहले से ही रुग्ण लालाजी को और भी रुग्ण, अशक्त एवं निढाल कर दिया । परिणामस्वरूप १७ नवम्बर १९२८ को वे स्वतंत्रता की बलिवेदी पर अपने प्राणों की भेंट चढ़ाकर नश्वर संसार से विदा हो गये। लेकिन पंजाब के साथ-साथ देश के अन्य क्रांतिकारी इस बात को कैसे मञ्जूर कर सकते थे कि उनके प्रिय नेता शेरे पंजाब को यूं निर्ममतापूर्वक मारने वाले पुलिस अधिकारी सस्ते में छूट जायें, वे जिंदा रहें, यह तो देश की जवानी पर कभी न धुलने वाला कलंक कहा जायेगा । सरदार भगत सिंह, चन्द्रशेखर आदि क्रांतिकारी एकत्र हुये, योजना बनी, एक्शन लिया गया तथा एक महीने की अवधि के भीतर ही निर्दोष, निहत्थे प्रदर्शनकारियों पर जुल्म ढाने वाले, लालाजी की हत्या करने वाले अंग्रेज पुलिस अधिकारी को मौत के घाट उतार दिया गया । इतना जरूर हुआ कि निशाना चूक गया और प्रमुख गुनहगार वरिष्ठ पुलिस अधिकारी जे.ए.स्कॉट (एस.एस.पी) बच गया, उसका सहायक साण्डर्स मारा गया । इसकी जिम्मेवारी क्रांतिकारी संगठन हिन्दुस्तान सोशलिस्ट रिपब्लिक आर्मी ने ली । प्रतिशोध ले लिया गया, गोरी सरकार को स्पष्ट संदेश दे दिया गया कि देश का नौजवान ऐसी ओछी हरकतों को सहन नहीं करेगा, मुंहतोड़ उत्तर देगा ।

हमारी विनम्र श्रद्धांजलि अपने चरित नायक पंजाब केसरी अपराजेय योद्धा लाला लाजपत राय को इन शब्दों में –

'था मातृभूमि की लाज व पत का लाजपत राय रखवाला,
ब्रिटिश सत्ता को भस्म कर गया बन प्रलयंकारी ज्वाला ।
दिग्दिगन्त में आज भी गूंजे शेरे पंजाब का गर्जन,
जिसको सुन भयभीत कांपता अंग्रेजों का लन्दन ।
भारत माँ के सच्चे सपूत तुम लाजपत बलिदानी,
कोटिशः-कोटिशः नमन तुम्हें हे अजेय अमर सेनानी ।
युगों-युगों तक अमर रहेगी तेरी बलिदान कहानी ।।'

दूरभाष : ०९४१६२९४३४७
०१६८१-२२६१४७

जवाहर नगर, पटियाला चौक
जींद (हरियाणा)-१२६१०२

बौद्धो के ब्रह्मदेश (म्याँमार) के रंगून से एक पाती

- आचार्य आनंद 'पुरूषार्थी'
अन्तर्राष्ट्रीय वैदिक मशीनरी

समा-आर्यप्रवर, सादर नमस्ते । ईश्वर कृपयात्र कुशलं तत्रास्तु ।

२२ सितम्बर २०१५ को एयर इंडिया के वायुयान से मध्याह्न साढ़े बारह बजे हम म्याँमार की पूर्व राजधानी रंगून पहुँचे । ये हमारी ग्यारहवीं विदेश यात्रा है । इसके पूर्व हम विश्व के पाँच महाद्वीपों के १२ देशों व भारत के २७ प्रान्तों में वैदिक धर्म का प्रचार कर चुके हैं । ५ अक्टूबर सोमवार को सायं ६.३० बजे म्याँमार में भारत के महामहिम राजदूत श्रीयुत गौतम मुखोपाध्याय जी (Indian High Commissioner) से उनके निवास पर जाकर एक शिष्ट मंडल के साथ मुलाकात की । आपसे वर्मा की वर्तमान राजनैतिक, धार्मिक, आर्थिक परिस्थितियों पर चर्चा की । वैदिक सिद्धान्तों पर विचार विमर्श किया और सत्यार्थ प्रकाश व अन्य वैदिक साहित्य भेंट किया । स्वाध्याय की प्रेरणा की । उ०प्र०, मध्यप्रदेश, महाराष्ट्र के संयुक्त के क्षेत्रफल के बराबर ६,७६,५७८ वर्ग कि.मी. का छोटा सा देश म्यांमार है । बिहार के गया से १५५० कि.मी. व दिल्ली से इसकी दूरी २५०० कि.मी. है । एशिया के मानसून क्षेत्र में स्थित इसका अधिकतम भाग कर्क रेखा व भूमध्य रेखा में है । इसकी सीमा चीन, लाओस देश, थाईलैण्ड, बांग्लादेश के साथ-साथ भारत के अरुणाचल प्रदेश, नागालैण्ड, मिजोरम व मणिपुर इन चार प्रान्तों को स्पर्श करती है । बंगाल की खाड़ी व अंडमान सागर के निकट होने के कारण गैस व पेट्रोल उत्पादक देश भी ये है । प्राचीन काल से आर्यावर्त्त का एक भूभाग रहे इस देश को अंग्रेजो ने तीन बार में १८२४ में गुलाम बना लिया था । अप्रैल १९३७ में यह स्वतंत्र उपनिवेश बन गया था पर जापान के कारण १९४८ में यह स्वतंत्र हो सका । १९६२ से २०११ तक यह गृहयुद्ध व सैनिक शासन से अभिसंतप्त रहा है अतः इसका यथोचित विकास न हो पाया । यहाँ की मुद्रा को Kyat कहते हैं जो भारत के १ रुपये में २० के बराबर है । यहाँ वर्मी भाषा बोली जाती है जो संस्कृत व पाली भाषा का विकृत रूप है । यहाँ की जनसंख्या ५ करोड़ ३२ लाख है जिसमें बौद्ध ८० प्रतिशत, ईसाई ७ प्रतिशत, मुस्लिम ४ प्रतिशत, आदिवासी ६ प्रतिशत, हिन्दू २ प्रतिशत व अन्य १ प्रतिशत हैं । ९९.९ प्रतिशत रहवासी माँसाहारी हैं । बहुसंख्यक भारतीय मूल के जन तम्बाकू, पान, मद्यपानादि दुर्व्यसनों से ग्रस्त हैं । सैनिक प्रशासन ने एक नीति के तहत संसद में २५ प्रतिशत सीटे सैनिकों के लिये आरक्षित कर दी है जिससे उनका वर्चस्व सदैव बना रहे । मुसलमान यहाँ कुछ भय से रहते हैं । सैनिक शासन के दौरान इनको इतना प्रताड़ित किया गया कि १० वर्षो में ३००० ग्राम खाली हो गये थे और २ लाख मुस्लिम बांग्लादेश शरणार्थी बन गये थे । यहाँ १४ राज्यों ६३ जिले हैं जिनमें ३० आर्य समाजें सक्रिय हैं जिनमें प्रतिसप्ताह सत्संग होता है । १८८५ व उसके बाद के वर्षो में बिहार, उ० प्र०, गुजरात, राजस्थान, बंगाल, आंध्र आदि प्रान्तों के कृषक, व्यापारी, श्रमिक यहाँ आये थे उनकी चौथी, पाँचवी पीढ़ी चल रही है जो बौद्धों के इस देश को स्थाई निवासी बन गई है । १८९६ में आर्य समाज की विचारधारा इस देश में पहुँची और वैदिक शिक्षा का सूत्रपात हुआ । १९६० में पूज्य आनन्द स्वामी जी, १९६२ में स्वामी ध्रुवानन्द जी व १९८० में (डॉ०) स्वामी सत्य प्रकाश जी यहाँ आये थे पुनः कोई गुरुकुलीय

स्नातक यहाँ आर्य प्रतिनिधि सभा द्वारा बुलाया नहीं जा सका है । आर्य सभा वर्मा द्वारा माण्डले आर्य समाज के तीन मंजिला वातानुकूलित नवनिर्मित भवन के उद्घाटन यज्ञ हेतु हमें आमंत्रित किया गया था जिसमें पूरे देश के लगभग सभी आर्य समाजों के आर्यबन्धु सम्मिलित हुए थे । इसी कार्यक्रम में बाद में आये माण्डले क्षेत्र के केबिनेट मंत्री श्री धान सो मियम्ब जी को हमने वर्मी भाषा का सत्यार्थ प्रकाश भेंट किया व पढ़ने की प्रेरणा दी । लगभग ६,७ आर्यसमाजों के १५ सार्वजनिक मंचों पर व १५ परिवारों में हमें अपनी बात को रखने का सुअवसर प्राप्त हुआ । वेदों के आविर्भाव ईश्वर के वेदोक्त स्वरूप, १६ संस्कार, शुद्ध आहार सहित अनेक विषयों पर हमने विस्तार पूर्वक चर्चा की । अनेक वेदमंत्रों की व्याख्या की । बौद्ध विचारों की ओर जन सामान्य का भयावह झुकाव देखकर खण्डन किया, नवपीढ़ी को संभालने हेतु टिप्स दिये । योगदर्शन के समाधि पाद के ३५ सूत्र व साधनपाद के १५ सूत्र पुरोहित वर्ग व कुछ अन्यों को पढ़ाये । यहाँ संसदीय चुनाव नवंबर में होने वाले हैं, ४० वर्षों से लोकतंत्र के लिए संघर्षशील नोबल पुरस्कार प्राप्त बहन सुश्री आग सूजी के जीतने की सम्भावना व्यक्त की जा रही है । पूरे देश में सैकड़ों बौद्ध बिहार, स्तूपों का जाल बिछा हुआ है । गरम पानी का झरना, चिड़ियाघर, तिलक, गाँधी, नेहरू जी की स्मृति रूप माण्डले की जेल आदि बहुत से दर्शनीय स्थल है । हम ६ अक्टूबर को एयर इंडिया के विमान से दिल्ली रवाना होंगे, वहाँ से राजस्थान के धौलपुर आर्य समाज में पंच दिवसीय वेदकथा और मथुरा में एक व्यवसायिक परिसर के उद्घाटन यज्ञ के बाद १५ अक्टूबर को होशंगाबाद पहुँच सकेंगे ।

सन्तो, साधको, विद्वानों, मनीषियों ने ये बात कही है । अपने आपको धोखा देना बहुत सरल है — क्योंकि वहाँ रोकने वाला कोई भी नहीं है । गृहमंदिर व आर्य समाज में सभी को नमन कहें ।

आर्य समाज मन्दिर
१६६, अनोरठा मार्ग
रंगून (वर्मा)

॥ ओ३म् ॥

आर्य समाज नरबा पीताम्बरपुर का वार्षिकोत्सव सम्पन्न

आर्य समाज नरवा पीताम्बरपुर का २५वां वार्षिकोत्सव एवं वेदप्रचार का कार्यक्रम दिनांक २९,३० एवं ३१ अक्टूबर तदनुसार बृहस्पति, शुक्र एवं शनिवार को प्राथमिक विद्यालय नरवा पीताम्बरपुर के प्रांगण में उत्साहपूर्ण वातावरण में सम्पन्न हुआ जिसमें प्रातः ८ बजे से ११ बजे तक यज्ञ प्रवचन एवं भजनोपदेश का कार्यक्रम था अपराह्न ३ से ५ बजे विविध सम्मेलन एवं सायं ७ बजे से ११ बजे तक भजनोपदेश एवं प्रवचन का कार्यक्रम था ।

इस कार्यक्रम में आमन्त्रित विद्वान थे आचार्य डॉ० शिवदत्त पाण्डेय—वेद वेदाङ्ग गुरुकुल विद्यापीठ धनपत गंज, सुल्तानपुर, पं० त्रियुगी नारायण पाठक गोरखपुर, पं० रवीन्द्र शास्त्री कानपुर । पं० परमानन्द प्रेमी भजनोपदेशक मऊ, श्री रामनारायण ढोलवादक टाण्डा एवं श्री सन्तमुनि जी कोलकाता ।

कार्यक्रम को सफल बनाने में श्री रवीन्द्रनाथ मिश्र, श्री अरविन्द्र मिश्र, श्री दिनेश मिश्र, श्रीराम नारायण जायसवाल, श्री सन्तोष मिश्र (राजू मिश्र), श्री विनीत मिश्र, श्री इन्द्रमणि मिश्र एवं श्रीराम सिरजन गौड़ का समुचित योगदान रहा । मंत्री श्रीकृष्ण मोहन मिश्र ने कार्यक्रम का सफल आयोजन किया ।

।। ओ३म् ।।

पंच महायज्ञ पाँच कष्टों को काटने वाले होते हैं

- श्री खुशहाल चन्द्र आर्य

हमारे त्यागी, तपस्वी, विद्वान्, ऋषि-मुनियों ने हर व्यक्ति को विशेष कर गृहस्थी को पाँच महायज्ञ नित्य सुचारू रूप से करने का आदेश दिया है। इन पाँच महायज्ञों से अनेकों लाभ तो है ही, पर विशेष लाभ यह है कि ये पाँचों यज्ञ पाँच किस्म के दुःखों व कष्टों को दूर करने वाले भी हैं। यानि इन यज्ञों से दुःखों व कष्टों का निराकरण होता है। वे पाँच महायज्ञ हैं (१) ब्रह्मयज्ञ (२) देवयज्ञ (३) पितृयज्ञ (४) बलिवैश्व देवयज्ञ (५) अतिथियज्ञ और कष्ट है आत्मिक, शारीरिक, पारिवारिक, प्राकृतिक तथा अज्ञान से बढ़ती दूरियां। पाँच यज्ञों से पाँच कष्ट कैसे दूर होते हैं, उनका संक्षिप्त परिचय यहाँ देते हैं।

१. ब्रह्मयज्ञ :- ब्रह्मयज्ञ, आत्मा के दुःखों व कष्टों का निवारण करके, आनन्द की अनुभूति करवाता है। ब्रह्मयज्ञ का तात्पर्य है सन्ध्योपासना करना तथा वेद आदि धार्मिक पुस्तकों का स्वाध्याय करना। मनुष्य को ईश्वर की स्तुति, प्रार्थना व उपासना नित्य प्रातः व सायं करनी चाहिए। इससे आत्मा में आये विकार यानि ईर्ष्या, द्वेष, घृणा, हिंसा आदि दोष नष्ट हो जाते हैं और उनकी जगह प्रेम, दया, करुणा, परोपकार की भावना व आनन्द का संचार होता है। ईश्वर की स्तुति, प्रार्थनोपासना का तात्पर्य है कि हम किसी एक शान्त व स्वच्छ स्थान पर मनको सब ओर से हटाकर, एकाग्र चित से अपनी दृष्टि को बाहर से हटाकर अन्दर डालकर पहले तो हम ईश्वर की स्तुति यानि प्रशंसा करें कि हे ईश्वर ! आप कितने सामर्थ्यवान् हो और किस प्रकार सृष्टि की रचना करके उसका संचालन व संहार भी आप ही करते हो और जीवों को उनके किये अच्छे व बुरे कर्मों का फल भी आप ही अपनी न्याय व्यवस्था से किस प्रकार देते हो यह ध्यान देना चाहिए। फिर अपने पूर्ण सामर्थ्य के बाद जो काम नहीं बनता हो उसकी सफलता पाने के किए और अधिक सामर्थ्य पाने की ईश्वर से प्रार्थना करनी चाहिए। फिर उसके पास बैठ कर अपने अवगुणों व दोषों का ध्यान करना चाहिए और ईश्वर के गुणों का स्मरण करते हुए अपने दोषों को छोड़ना और ईश्वर के गुणों को अपने जीवन में उतारने का प्रयत्न करना चाहिए। इस प्रकार मनुष्य ब्रह्मयज्ञ से अपने दुर्गुणों को छोड़ता है और ईश्वर के गुण दया, करूणा व परोपकार की भावना से जुड़ता हुआ अपने जीवन को पवित्र बनाता है। ब्रह्मयज्ञ में सन्ध्योपासना के साथ-साथ वेदों तथा धार्मिक पुस्तकों का स्वाध्याय करना भी आता है जिससे मनुष्य अपने ज्ञान को बढ़ाता है और वेदों के अनुसार चल कर मोक्ष की तरफ अग्रसर होता है, जो जीव का अन्तिम लक्ष्य है, जिसको पाने के लिए जीव अच्छे कर्म करते हुए मनुष्य योनि में आता है।

२. देवयज्ञ :- यह महायज्ञ मनुष्य के शरीर से सम्बन्ध रखता है। देवयज्ञ का तात्पर्य है, हवन करके सब जड़ देवों को प्रसन्न करना होता है। विश्व में पाँच जड़ देवता है, जिनके नाम हैं, जल, वायु,

अग्नि, पृथ्वी और आकाश । इन पाँचों जड़ देवताओं का अग्नि मुख हैं । जिस प्रकार हम अपने शरीर को स्वस्थ्य रखने के लिए मुख से भोजन करते हैं और उस भोजन का पेट में जाकर रस, रक्त आदि बनकर पूरे शरीर में जाता है और पूरे शरीर की कमियों की पूर्ति करता है, तब मनुष्य स्वस्थ रह पाता है । यही काम यज्ञ का है । वह भी अग्नि में जो घृत, सामग्री व समिधा आदि डाली जाती है । उसकी सुगन्ध अग्नि में डालने से हजार गुणा बढ़ जाती है और वह सुगन्ध जल, वायु, अग्नि, पृथ्वी व आकाश में फैल कर सबको सुगन्धित कर देती है जिससे सारा वातावरण शुद्ध और पवित्र हो जाता है । ऑक्सीजन की मात्रा बढ़ जाती है जो जीव के लिए लाभदायक है । हाईड्रोजन व नाईट्रोजन गैस कम हो जाती है जिससे मनुष्य का शरीर स्वस्थ्य रहता है यानि शरीर में जो रोग व बिमारियाँ रहती हैं, वे दूर जाती है और शरीर स्वस्थ हो जाने से मनुष्य का जीवन सुखी व आनन्दित बन जाता है । इस प्रकार देवयज्ञ से शरीर के कष्ट दूर हो जाते हैं ।

३ . पितृयज्ञ :- पितृयज्ञ से परिवार व गृहस्थ सुखी बनता है । जिस घर में पितर जनों का आदर व सम्मान होगा तथा उनकी सभी आवश्यकताएं पूर्ण होगी तो उनके आशीर्वाद और उनके अनुभवों का लाभ उस परिवार को मिलेगा जिससे वह परिवार भी सुखी बना रहेगा । हमारे पौराणिक भाई मरे हुओं का श्राद्ध व तर्पण करते हैं, परन्तु वेद हमें मरे हुए पितरों का श्राद्ध व तर्पण करना नहीं सिखाता बल्कि जीवित माता-पिता व वृद्ध जनों की श्रद्धापूर्वक सेवा, सुश्रूषा करके उनकी आत्मा को प्रसन्न रखना सिखाता है । जिसको श्राद्ध कहते हैं । अपने स्वभाव व व्यवहार से बड़ों के मन को तृप्त रखना ही तर्पण कहलाता है जो जीवितों का ही कर पाना सम्भव है । मरने के बाद करना एक अन्ध विश्वास ही है ।

४ . बलिवैश्व देवयज्ञ :- इस यज्ञ से सब जीवों को प्रसन्न रखना है । जो भूखा है उसको भोजन देना, जो प्यासा है उसको जल देना । जो असहाय है उसकी सहायता करना । जो जीव हम पर आश्रित है उसकी रक्षा करना ही बलिवैश्वदेव यज्ञ है । इस यज्ञ में जीव हिंसा का कोई स्थान नहीं है । जब सब जीव प्रसन्न रहेंगे तो प्रकृति भी शान्त रहेगी उसमे किसी प्रकार का प्रकोप नहीं होगा और सब जगह शान्ति बनी रहेगी ।

५ . अतिथि यज्ञ :- घरों में अज्ञानता से जो वैमनस्य बना रहता है, आपस में वैर-भाव रहता है और परस्पर लड़ते-झगड़ते रहते हैं, अथिथि यज्ञ से ये सब समाप्त हो जाते हैं । अतिथि यज्ञ का तात्पर्य यह है कि गृहस्थियों के घर पर साधु, सन्त, संन्यासी, विद्वान्, वानप्रस्थी व गुरुकुलों के आचार्यों व ब्रह्मचारियों का आना-जाना बना रहना । (जिस गृहस्थ में संन्यासी, वानप्रस्थी व विद्वानों का आदर-सत्कार होगा, उनका घरों में प्रवचन होंगे, उपदेश होंगे तो उस घर में परस्पर का विरोध व कटुता कभी भी नहीं रहेगी, कारण परस्पर का विरोध व कटुता अज्ञान से उत्पन्न होती है । जब सन्यासियों और विद्वानों के सद्उपदेश जिस घर में होंगे उस घर से अज्ञानता दूर हो जायेगी और परस्पर का प्रेम व सहृदयता का वातावरण बन जायेगा, तब पति-पत्नी, सास-बहू, भाई-भाई का झगड़ा कभी नहीं होगा और वह घर परस्पर के शुद्ध व्यवहार से स्वर्ग के समान बन जायेगा । इस प्रकार इन पाँच महायज्ञों

से ऊपर लिखे इन पाँच दुःखों व कष्टों की निवृत्ति होतीहै । इसलिए हर व्यक्ति को विशेष कर हर गृहस्थी को अपना जीवन व गृहस्थ को सुखी बनाने के लिए ये पाँच महायज्ञ अवश्य करने चाहिए ।

इस लेख को लिखने के भाव मेरे मन में तब जगे जब आर्य समाज बड़ाबाजार का वेद-सप्ताह यानि श्रावणी-उपाक्रम जो २३ से २९ अगस्त २०१५ तक मनाया गया था । उसीके प्रथम दिन प्रातः के सत्र में पूज्य आचार्य ब्रह्मदत्त जी का प्रवचन इसी विषय पर हुआ था । वह प्रवचन मुझे बहुत ही अच्छा लगा, इसलिए इसका लाभ अन्य विज्ञ पाठकजन भी उठा सकें । इस भावना से प्रेरित होकर मैंने यह लेख लिखा है । आशा है इसका अधिक से अधिक लाभ पाठकगण उठायेंगे ।

फोन-२२१८३८२५, ६४५०५०१३
(ऑ:) : २६७५८९०३
मो० : ९८३०१३५७९४

C/o गोविन्द राम आर्य एण्ड सन्स
१८०, महात्मा गाँधी रोड, (२ तल्ला),
कोलकाता-७००००७

आचार्यपद रजत जयन्ती समारोह

आर्ष गुरुकुल महाविद्यालय नर्मदापुरम् होशंगाबाद में गुरुकुल के १०४ वार्षिकोत्सव के अवसर पर H e p ' **जगद्देव नैष्ठिक जी** (स्वामी ऋतस्पति जी परिव्राजक) के आर्ष गुरुकुल महाविद्यालय नर्मदापुरम् होशंगाबाद के आचार्यपद को सुशोभित करने के २५ वर्ष होने के अवसर पर दिनांक २७,२८ एवं २९ नवम्बर २०१५ को आचार्यपद रजत जयन्ती समारोह मनाया जा रहा है । आप सभी गुरुकुल हितैषी धर्म प्रेमी सज्जन इष्ट मित्रों सहित सपरिवार सादर आमन्त्रित हैं । पधारकर कार्यक्रम की शोभा बढ़ायें ।

दूरभाष : ०९४२४४७१२८८
०९९०७०५६७२६

- आचार्य योगेन्द्र याज्ञिक
सचिव - आर्ष गुरुकुल समिति
मो० : ०९४२४४७१२८

बिहार राज्य आर्य प्रतिनिधि सभा का निर्वाचन सम्पन्न

बिहार राज्य आर्य प्रतिनिधि सभा, श्री मुनीश्वरानन्द भवन, नया टोला, पटना का निर्वाचन दिनांक १३ सितम्बर २०१५ को आर्य समाज मंदिर झाउगंज, पटना सिटी में इस निर्वाचन में श्री भाई वीरेन्द्र विधायक, मनेर को प्रधान, श्री रमेन्द्र कुमार गुप्ता को मंत्री एवं श्री जयदेव कुमार आर्य को कोषाध्यक्ष सर्वसम्मति से चुना गया ।

रमेन्द्र कुमार गुप्त
बिहार राज्य आर्य प्रतिनिधि सभा
श्री मुनीश्वरानन्द भवन
नया टोला, पटना-४

वेदोक्त ईश्वर की मान्यता

– अभिमन्यू कुमार खुल्लर

महर्षि दयानन्द इस रोग से मुक्त थे कि विदेश में जाकर धर्म प्रचार से उनकी अन्तर्राष्ट्रीय छवि बनेगी । अन्तर्राष्ट्रीय छवि बनने के इस लाभ की कल्पना को उन्होंने अपने पास भी नहीं फटकने दिया कि वह भारत में और अधिक पूज्यनीय बन जायेंगे । वे इस रोग से भी मुक्त थे कि अंग्रेजी जानकर, उसमें पर्याप्त भाषण कला का निखार कर, जनसाधारण ही नहीं भारत के बौद्धिक जगत् में भी उनकी धाक जम जाएगी ।

पूजनीय बनने व बौद्धिक जगत् में धाक जमाने का लालच उन्हें स्पर्श भी नहीं कर पाया था । तत्कालीन सन्त समाज प्रमुख स्वामी विशुद्धानन्द सरस्वती (वाराणसी) ने कहा था कि दयानन्द ! तुम मूर्ति पूजा का विरोध छोड़ दो, हम तुम्हें विष्णु का अवतार घोषित कर, भारत भर में पूजनीय बनवा देंगे । महर्षि ''नकटा सम्प्रदाय'' में शामिल होने को तैयार नहीं हुए । नकटा सम्प्रदाय का अभिप्राय समझने के लिये महर्षि का जीवन-चरित पढ़ने का कष्ट करें । ब्रह्मसमाज के प्रमुख नेता आचार्य केशवचन्द्र ने महर्षि से कहा-काश ! आप अंग्रेजी जानते और मेरे साथ इंग्लैण्ड चलते । आशय उपरोक्त वर्णित उद्देश्यों के अतिरिक्त क्या हो सकता है ? महर्षि ने उत्तर दिया — काश, आप अपनी भाषा में प्रवचन करते तो ज्यादा जनता को समझ में आता पर आप तो उस भाषा (अंग्रेजी) में प्रवचन करते हैं जो देश की जनता समझती ही नहीं । सुविज्ञ पाठक जानते हैं कि महर्षि अंग्रेजी का अभ्यास कर रहे थे । बम्बई प्रवास में वह प्रतिदिन अंग्रेजी अखबार सुनते थे । उनका अंग्रेजी का अभ्यास मैक्समूलर जैसे विदेशी विद्वानों को सही वेदार्थ समझाने के अतिरिक्त और क्या हो सकता था, जिन्हें वेदार्थ पद्धति का भ्रमित ज्ञान था — महीधर और सायण आदि भाष्यकारों की कृपा से । भारत का चतुर्दिक, सम्यक विकास उनका प्रथम और अंतिम लक्ष्य था । जैसे जैसे वह प्रचार कार्यक्रम में धंसते चले गये उनका इस लक्ष्य प्राप्ति के लिये आग्रह और प्रबल होता चला गया । यहाँ तक कि व्यक्तिगत मोक्ष, जिसके लिये उन्होंने गृह त्याग किया था, को भी तिलांजलि दे दी थी । इतना तो लेख की भूमिका समझ लीजिए । बैताल की तरह महर्षि कन्धे पर, मन-मस्तिष्क पर सवार रहते हैं । लेख कहाँ से प्रारम्भ करने का मन बनाया था, पर हुआ महर्षि से, यही होना था और यही हुआ भी ।

पाँच-छैः महीने पूर्व एक वेद मंत्र दृष्टि में आया था । उसके बाद ध्यान से उतर गया । संस्कृत पढ़ी नहीं है पर विद्वानों की हिन्दी में व्याख्याएं पढ़ लेता हूँ, सुन लेता हूँ । कुछ दिनों से उसे ढूँढने का प्रयास कर रहा था, पर सफलता नहीं मिली । श्रद्धेय शिवनारायण उपाध्याय जी (कोटा) को समस्या बताई । उन्होंने वेदमंत्र ही नहीं, उस पर एक लेख लिख कर भेज दिया । मेरे मस्तिष्क में यह बात बार बार कौंध जाती थी कि इस मंत्र के जानकार होते हुए भी पौराणिक विद्वान किस तरह विभिन्न ईश्वरों के निर्माण करने में संलग्न रहे और आज भी हैं । नए ईश्वर गढ़ो, उनके पूजन-अर्चन से प्राप्त लाभों की मार्केटिंग करने के लिये सेल्समेन लगा दो । हलवे-मांडे की दीर्घकालीन व्यवस्था सुनिश्चित है । वैष्णोदेवी, गायत्री माता, शिरड़ी के साँई बाबा, पुट्टपार्थी के साँईबाबा भगवान सब यही तो हैं । ज्यादा कठिन, गूढ़ संस्कृत नहीं है इसलिये मैं मंत्र को प्रस्तुत करता हूँ —

यत एतं दैवमेकवृतं वेद । १३.४.१५

न द्वितीयो, न तृतीयश्चतुर्थो नाप्युच्यते । १३.४.१६

न पञ्चमों न षष्ठ: सप्तमो नाप्युच्यते । १३.४.१७

ना अष्टमों न नवमो दशमो नाप्युच्यते । १३.४.१८

मुझ जैसे केवल हिन्दी जानने वालों के मानसिक प्रवाह को बनाए रखने के लिये मैंने प्रत्येक मंत्र के अंतिम पद यत एतं वेदमेकवृतं वेद का लोपकर दिया है ।

श्रद्धेय उपाध्याय जी के अर्थ को यथावत रखता हूँ । वह अकेला वर्तमान न दूसरा, न तीसरा व चौथा कहा जाता है । वह न पाँचवा न छठां, न सातवां कहा जाता है । वह न आठवां, न नवां, न दशवां ही कहा जाता है । एक से दस तक मस्तिष्क पर हथौड़ा मार मार कर वेद कह रहा है कि वह एक ही है । क्या अब भी समझ में नहीं आता कि ईश्वर केवल एक ही है । इतने शक्तिशाली ढंग से ईश्वर के एकत्व का महिमा मण्डन कौनसा धर्म करता है — इस्लाम ? वहाँ तो रसूललिल्लाह मोहम्मद पैगम्बर जुड़े हुए हैं उनको पारकर, बायपास कर सीधे अल्लाह के पास पहुँचा नहीं जा सकता । ईसाईयत ? वहाँ ईसा मसीह के माध्यम से ही पहुँच है । इनकी हमें इतनी ज्यादा चिन्ता नहीं, जितनी भारत में हजारों और नित नए जन्म लेकर परमात्माओं की संख्या वृद्धि करने वालों की है । समस्त भारतीयों को भी हाल ही में मालुम पड़ गया कि बंगला देश में प्रख्यात् ढाकेश्वरी मंदिर है, अब देखना धार्मिक यात्राओं का प्रवाह प्रारम्भ हो जावेगा । यहाँ के मंदिरों, कब्रगाहों से जिनको लाभ नहीं हुआ वे ढाकेश्वरी मंदिर जाएगें ही ।

महर्षि ने दिल्ली सरकार के समय एक धार्मिक दरबार भी लगाया था । समस्त उपस्थित धर्माचार्यो से प्रबल आग्रह किया था कि धर्म के मूल सिद्धान्तों पर जिनमें मतभेद नहीं है, हम एक धर्म स्वीकार कर लें । विरोधी तत्वों को भविष्य में समाधान के लिये छोड़ दें तो देशोन्नति का मार्ग प्रशस्त हो जावेगा । यह नहीं हुआ, होना भी नहीं था । क्योंकि एक वेदोक्त ईश्वर की मान्यता होने से उनके फूस के महल ढ़ह जाते । आचार्य केशवचन्द्र सेन ने तो विफलता का ठीकरा ही महर्षि के सिर पर फोड़ दिया । महर्षि वेद के अपौरूषेय मानना छोड़ दे तो वे तैयार हैं । महर्षि ने तो देश की एकता के लिये सुदृढ़ आधार रखने के लिये जिन तीन तत्वों का उल्लेख किया है, उनमें धर्म सबसे प्रथम है । देश उनके समय भी पूर्णतया धार्मिक था और आज भी है । कौन धार्मिक एकता के लिये प्रयत्न करे ?

पौराणिक विद्वान, साधु संत, मठाधीश, क्या भूलकर भी चाहेंगे कि तिरूपति बालाजी के भगवान्, शिरड़ी के सांईबाबा वाले, पुट्पार्थी के साँई बाबा वाले भगवान, सोमनाथ जी, द्वारिकाजी, पुरी, उज्जैन वाले भगवान सब मिलकर एक निराकार, सर्वशक्तिमान भगवान में समा जावें ? बिल्कुल असंभव ? मुझे आगामी सैकड़ों-हजारों वर्षो तक संभव नहीं दिखता । इनकी जड़ों में मठा डालने वाला दयानंद तो १८८३ में ५९ वर्ष की आयु में ही चला गया । पहला दयानंद महर्षि जैमिनी के पश्चात् छैः हजार वर्ष बाद आया था । दूसरा दयानंद प्रभु कब भेजेगा ? भेजेगा भी या नहीं, कुछ पता नहीं ।

सेवानिवृत्त वरिष्ठ लेखाधिकारी (केन्द्र)

२२, नगरनिगम क्वार्टस जीवाजीगंज,

लश्कर ग्वालियर (म०प्र०)

फोन : ०७५१-२४२५९३१

ईमेल-khullar2010@gmail.com

स्वामी जी के पत्रों तथा विज्ञापनों में यज्ञ व योग सम्बन्धी चर्चा

– डॉ॰ अशोक आर्य

आर्य समाज के संस्थापक स्वामी दयानंद सरस्वती जी जानते थे कि मानवीय शरीर का रोगरहित तथा बलवान् होना आवश्यक है । रोगरहित होने के लिए यज्ञ आवश्यक है तो बलवान् होने के लिए योग की भी महती आवश्यकता होती है । इसलिए समय समय पर स्वामी जी अपने पत्रों तथा अपने विज्ञापनों के द्वारा यज्ञ तथा योग पर अपनी कलम चलाते रहे । पंडित युधिष्ठिर जी मीमांसक ने चार भागों में स्वामी जी के पत्रों व विज्ञापनों का सम्पादन कर महती कृपा की है । आओ स्वामी जी के पत्रों तथा विज्ञापनों के माध्यम से यज्ञ व योग सम्बन्धी जानकारी लें :-

विज्ञापन पत्रमिदम्

(पूर्ण संख्या ३०)

देवालय, देवायतन, देवगार तथा देवमंदिर इत्यादिक सब नाम यज्ञशालाओं के ही हैं, क्योंकि जिस स्थान में देवपूजा होवे उसके नाम हैं देवाल्यादिक और देव संज्ञा है परमेश्वर की, तथा परमेश्वर की आज्ञा, जो वेद उसके मन्त्रों की भी देव संज्ञा है ।.....ब्रह्मा विष्णु महादेवादिक देव जो देवलोक में रहते हैं, उनका भी पूजन कभी न करना चाहिए, एक परमेश्वर के बिना ।[१]

अग्निर्देवतेत्यादिक जो यजुर्वेद में लिखा है सो अग्नि आदिक सब नाम परमेश्वर के ही हैं, क्योंकि देवता शब्द के विशेषण देने से । अग्निमिडे पुरोहितं इति यह मन्त्र ही देवता है, अन्य कोई नहीं । इससे क्या आया कि परमेश्वर और वेदों के मन्त्र तो देव और देवता हैं।

जिस स्थान में होम, परमेश्वर का विचार, ध्यान और समाधि करें, उसके नाम हैं देवाल्यादिक । मनुस्मृति के श्लोकों से क्या आया कि होम जो हैं सोई देव पूजा है । अन्य कोई नहीं और होमास्थान जितने हैं, वे ही देवाल्यादिक शब्दों से लिए जाते हैं ।[२]

जिन्हों का यज्ञ करने का शील अर्थात् स्वभाव होवे, उसका सब धन यज्ञ के वास्ते ही होता है अर्थात् देवार्थ धन है ।.....होम के लिए जो धन होवे उसका नाम देवस्व है । सो भिक्षा अथवा प्रतिग्रह करके यज्ञ के नाम से धन ले के यज्ञ तो करे नहीं और उस धन से अपना व्यवहार करें, इसका नाम है देवल ।[३]

---

१. ऋषि दयानन्द सरस्वती पत्र और विज्ञापन सम्पादक प० युधिष्ठिर मीमांसक, पृष्ठ ३५-३६

२. ऋषि दयानन्द सरस्वती पत्र और विज्ञापन सम्पादक प० युधिष्ठिर मीमांसक, पृष्ठ ३६-३८

३. ऋषि दयानन्द सरस्वती पत्र और विज्ञापन सम्पादक प० युधिष्ठिर मीमांसक, पृष्ठ ३८

अग्नि में जल का भाव करके हाथ डाले तो क्या वह न जल जाएगा ? किन्तु जल ही जाएगा । इससे क्या आया कि पाषाण को पाषाण ही मानना चाहिए और देव को देव ही मानना चाहिए, अन्यथा नहीं । इससे जो हजैसा पदार्थ है वैसा ही उसको सज्जन लोग मानें ।

काश्यादिक स्थान, गंगादिक तीर्थ, एकादशी आदिक व्रत, राम, शिव कृष्णादिक नाम स्मरण तथा तोबा शब्द वा यीसू के विश्वास से पापों का छूटना और मुक्ति का होना तिलक छाप माला धारण तथा शैव शक्त गाणपत्य वैष्णव क्रिश्चन और महाम्मादी और नान्हक कबीर आदिक सम्प्रदाय इन्होंने से पाप सब छूट जाते हैं और मुक्ति भी होती है, यह अन्यथा बुद्धि ही है । क्योंकि इस प्रकार के सुनाने और मि[illegible]य के होने से सब लोग पापों में प्रवृत हो जाते हैं ।[१]

जैसा सूक्ष्म विभु आकाश है, वैसी ही योगी की बुद्धि होती है ।.....योगी का जो चित है, सोई चंद्रादित्य आदिक स्वरूप हो जाता है ।[२]

जैसा स्वप्नावस्था में चित ज्ञानस्वरूप होक पुर्वानुभूत संस्कारों को यथावत देखता है, तथा निद्रा अर्थात् सुषुप्ति में आनंदस्वरूप ज्ञानवान् चित होता है, ऐसा ही जागृत अवस्था में जब योगी ध्यान करता है । इस प्रकार आल्मब से तब योगी का चित स्थिर हो जाता है ।[३]

ओंकार का वाच्य ईश्वर है और उसका वाचक ओंकार है । बाह्य विषय से इनको ही लेना, और कोई नहीं । क्योंकि अन्य का प्रमाण कहीं नहीं ।[४]

जब ध्याता ध्यान और ध्येय इन तीनों का पृथक भाव न रहै, तब जानना कि समाधि स्थिर हो गई ।[५]

जब योगी चित्तवृत्तियों का निरोध करता है, बाहर और भीतर से उसी वक्त द्रष्टा जो आत्मा उसके चेतन स्वरूप में ही स्थित हो जाती है अन्यत्र नहीं ।......विपरीत ज्ञान जो होता है उसी को मित्थ्या ज्ञान कहते हैं । उसको तो योगी छोड़ के ही होता है, अन्यथा कभी नहीं ।[६]

१०४, शिप्रा अपार्टमेंट
मो० ०९७१८५२८०६८ कौशाम्बी २०१०१०, गाजियाबाद

—०—

१. ऋषि दयानन्द सरस्वती पत्र और विज्ञापन सम्पादक प० युधिष्ठिर मीमांसक, पृष्ठ ३९
२. ऋषि दयानन्द सरस्वती पत्र और विज्ञापन सम्पादक प० युधिष्ठिर मीमांसक, पृष्ठ ४१
३. ऋषि दयानन्द सरस्वती पत्र और विज्ञापन सम्पादक प० युधिष्ठिर मीमांसक, पृष्ठ ४१
३. ऋषि दयानन्द सरस्वती पत्र और विज्ञापन सम्पादक प० युधिष्ठिर मीमांसक, पृष्ठ ४२
३. ऋषि दयानन्द सरस्वती पत्र और विज्ञापन सम्पादक प० युधिष्ठिर मीमांसक, पृष्ठ ४३
३. ऋषि दयानन्द सरस्वती पत्र और विज्ञापन सम्पादक प० युधिष्ठिर मीमांसक, पृष्ठ ४३-४४

आर्य समाज कलकत्ता, १९ विधान सरणी कोलकाता - ६ के लिए श्री राजेन्द्र प्रसाद जायसवाल द्वारा प्रकाशित तथा एशोशियेटेड आर्ट प्रिण्टर्स, ७/२, विडन रो, कोलकाता-६ में मुद्रित । मो. : ९८३०३७०४६३